क्या ईश्वर मर गया है?

अनुक्रम

1. जो मर जाए वह ईश्वर ही नहीं...2
2. जो मिटेगा, वही पाएगा...15
3. ज्ञान की पहली किरण..30
4. प्रेम की भाषा...46

क्या ईश्वर मर गया है?
पहला प्रवचन

जो मर जाए वह ईश्वर ही नहीं

मेरे प्रिय आत्मन्!

एक छोटी सी कहानी से मैं आज की चर्चा प्रारंभ करना चाहूंगा।
एक सुबह की बात है, एक बड़े पहाड़ से एक व्यक्ति बहुत गीत गाता हुआ नीचे उतर रहा था। उसकी आंखों में किसी बात को खोज लेने का प्रकाश था। उसके हृदय में किसी सत्य को जान लेने की खुशी थी। उसके कदमों में उस सत्य को दूसरे लोगों तक पहुंचा देने की गति थी। वह बहुत उत्साह से और बहुत आनंद से भरा हुआ प्रतीत हो रहा था।
अकेला था पहाड़ के रास्ते पर और नीचे मैदान की तरफ उतर रहा था। बीच में उसे एक बूढ़ा आदमी मिला, जो पहाड़ की तरफ, ऊपर को चढ़ रहा था।
उस व्यक्ति ने उस बूढ़े आदमी को पूछाः तुम पहाड़ पर किसलिए जा रहे हो?
उसे बूढ़े ने कहाः परमात्मा की खोज!
और वह व्यक्ति जो पहाड़ से नीचे की तरफ उतर रहा था, यह सुन कर बहुत जोर
से हंसने लगा और उसने कहा, क्या यह भी हो सकता है कि तुम्हें अभी तक वह दुखद समाचार नहीं मिला?
उस बूढ़े आदमी ने पूछाः कौन सा समाचार?
उस व्यक्ति ने कहाः क्या तुम्हें अभी तक पता नहीं कि ईश्वर मर चुका है? तुम किसे खोजने जा रहे हो? क्या जमीन पर नीचे मैदानों तक अब तक यह खबर नहीं पहुंची कि ईश्वर मर चुका है? मैं पहाड़ से आ रहा हूं और मैं भी ईश्वर को खोजने गया था, लेकिन वहां जाकर मुझे ईश्वर तो नहीं, ईश्वर की लाश मिली। और क्या दुनिया तभी विश्वास करेगी, जब अपने हाथों से उसे दफना देगी? क्या यह खबर अब तक नहीं पहुंची?
मैं यही खबर लेकर नीचे उतर रहा हूं कि मैदानों में जाऊं और लोगों को
कह दूं कि पहाड़ों पर जो ईश्वर रहता था, वह मर चुका है। लेकिन बूढ़े आदमी ने विश्वास नहीं किया। साधारणतः कोई मर जाए तो उसकी बात पर भी हम विश्वास नहीं करते हैं। ईश्वर के मरने पर कौन विश्वास करता है? उस बूढ़े आदमी ने समझा कि युवक पागल हो गया है। वह अपने रास्ते पर बिना कुछ कहे, पहाड़ चढ़ने लगा और उस युवक ने सोचा कि अजीब है यह आदमी, जिसे खोजने जा रहा है, वह मर चुका है और फिर भी खोज को जारी रखना चाहता है। लेकिन वह नीचे की तरफ उतरता रहा। रास्ते में उसे और एक साधु मिला, जो आंखें बंद किए हुए किसी के ध्यान में लीन था। उस युवक ने उसे झकझोरा और कहा कि किसका चिंतन करते हो? किसका ध्यान करते हो? उसने कहाः परमात्मा का स्मरण कर रहा हूं। वह युवक हंसा और बोला कि मालूम होता है यह खबर ले जाने का दुखद काम मुझे ही करना पड़ेगा कि तुम जिसका ध्यान कर रहे हो, बहुत समय हुआ, मर चुका। अब उसके ध्यान करने से कुछ भी नहीं होगा। अब उसके स्मरण करने से कुछ भी नहीं होगा और अब उसके गीत और प्रार्थनाएं कोई भी फल न लाएंगी, क्योंकि मुर्दा आदमी कुछ नहीं कर सकता, मुर्दा परमात्मा भी क्या करेगा? और वह युवक और नीचे उतरा। और उसी पहाड़ पर मैं भी गया था और मेरी भी उससे मुलाकात हुई। वही मैं आपसे कहना चाहता हूं। उस आदमी ने मुझसे भी पूछा कि कहां जाते हो? इसके पहले कि मैं उसको कोई उत्तर देता, मैंने भी उससे पूछाः तुम कहां जाते हो? उसने कहाः एक खबर मेरे पास है, उसे दुनिया को मुझे कहना है। और उसने मुझसे कहा कि ईश्वर मर गया है, तुम्हें पता चला? मैंने उस आदमी को कहा कि मेरे पास भी एक खबर है और वह मुझे भी दुनिया को कहनी है। और क्या तुम्हें पता है कि जो ईश्वर मरा है वह ईश्वर था ही नहीं। एक झूठा ईश्वर मर गया है। कुछ लोग उस झूठे ईश्वर के जिंदा होने के ख्याल में हैं और कुछ लोग उस झूठे ईश्वर के मर जाने के ख्याल में हैं। लेकिन जो सच्चा ईश्वर था, वह अब भी है और हमेशा रहेगा। तो मैंने उससे कहा कि तुम एक खबर दुनिया को कहना चाहते हो और मैं भी एक खबर कहना चाहता हूं कि जो मर गया है, वह सच्चा ईश्वर नहीं था, क्योंकि जो मर सकता है, वह जीवित ही न रहा होगा। जीवन का मृत्यु से कोई भी संबंध नहीं है।

जहां जीवन है, वहां मृत्यु नहीं है। और जहां मृत्यु हो, जानना कि जीवन भ्रामक था और झूठा था, कल्पित था। मृत्यु ही सत्य थी। वह जो मरा हुआ है, वही केवल मरता है। जो जीवित है, उसके मरने की कोई संभावना नहीं है। जीवन के मर जाने से ज्यादा असंभव और कोई बात नहीं हो सकती है और ईश्वर तो समग्र जीवन का नाम है।
वह आदमी दुनिया के कोने-कोने में अपनी खबर कहता फिरता है मुझको भी उसका पीछा करना पड़ रहा है। जहां वह जाता है, वहां मुझे भी जाना पड़ता है। जरूर आपसे भी उसने यह बात आकर कही होगी कि ईश्वर मर चुका है। बहुत तरकीबें हैं उस बात को कहने की, बहुत से रास्ते हैं, बहुत सी व्यवस्थाएं हैं। बहुत ढंगों से यह खबर आप तक भी निश्चित ही पहुंच गई होगी कि ईश्वर मर चुका है। मैं आपको दूसरी बात कहना चाहूंगा इन आने वाले चार दिनों की चर्चाओं में, वह यह कि जो ईश्वर मर चुका है वह जिंदा ही नहीं था। कुछ लोगों ने उसे झूठा ही जीवन दे रखा था। और अच्छा हुआ कि वह मर गया है। और अच्छा हुआ होता कि वह कभी पैदा ही न होता। और अच्छा हुआ होता कि वह बहुत पहले मर गया होता। इसलिए यह खबर सुखद है, दुखद नहीं। लोगों ने आपसे बहुत रूपों में कहा होगा कि धर्म की मृत्यु हो गई है। यह बहुत अच्छा हुआ है, क्योंकि जो धर्म मर सकता है, वह मर ही जाना चाहिए। उसे जिंदा रखने की कोई जरूरत नहीं है। और जब तक झूठा धर्म जिंदा रहेगा और झूठा ईश्वर जीवित मालूम पड़ेगा, तब तक सच्चे ईश्वर को खोजना अत्यंत कठिन है, क्योंकि सच्चे ईश्वर और हमारे बीच में झूठे ईश्वर के अतिरिक्त और कोई भी नहीं खड़ा हुआ है। मनुष्य के और परमात्मा के बीच में एक झूठा परमात्मा खड़ा हुआ है। मनुष्य के और धर्म के बीच में अनेक झूठे धर्म खड़े हुए हैं। वे गिर जाएं, वे जल जाएं, वे नष्ट हो जाएं, तो मनुष्य की आंखें उसकी तरफ उठ सकती हैं जो कि सत्य है और परमात्मा है।
कौन सा ईश्वर झूठा ईश्वर है? मंदिरों में जो पूजा जाता है, वह ईश्वर झूठा है, वह इसलिए झूठा है कि उसका निर्माण मनुष्य ने किया है। मनुष्य ईश्वर को बनाए, इससे ज्यादा झूठी और कोई बात नहीं हो सकती है। ईश्वर ने मनुष्य को बनाया होगा, यह तो हो भी सकता है, लेकिन यह कैसे हो सकता है कि मनुष्य और ईश्वर को बनाए! लेकिन जितने प्रकार के मनुष्य हैं उतने ही प्रकार के ईश्वर हमने निर्मित कर लिए हैं। और जितने प्रकार के मनुष्य हैं उतने ही प्रकार के मंदिर हैं, उतने ही प्रकार की मस्जिदें हैं, उतने ही प्रकार के गिरजाघर हैं, और, और न मालूम क्या हैं। हम सबने मिल कर न मालूम कितने प्रकार के ईश्वर ईजाद कर लिए हैं। ये ईश्वर निश्चित ही झूठे हैं। ईश्वर ईजाद नहीं किया जा सकता है, इनवेंट नहीं किया जा सकता। कोई उसे न तो पत्थर के द्वारा निर्मित कर सकता है और न शब्दों के द्वारा और न रंगों के द्वारा और न रेखाओं के द्वारा, क्योंकि जो भी हम निर्मित कर सकेंगे, वह हमसे भी कच्चा और हमसे भी ज्यादा झूठा और हमसे भी ज्यादा क्षणभंगुर होगा। मनुष्य ईश्वर निर्मित नहीं कर सकता, लेकिन ईश्वर को उपलब्ध कर सकता है। मनुष्य ईश्वर की ईजाद नहीं कर सकता लेकिन ईश्वर का आविष्कार कर सकता है। इनवेंट तो नहीं कर सकता, डिस्कवर कर सकता है। मनुष्य ने जितने भी ईश्वर ईजाद किए हैं वे सब झूठे हैं। और इन्हीं ईश्वरों के कारण, इन्हीं धर्मों, रिलिजंस के कारण, रिलीजन, धर्म का, दुनिया में कहीं कोई पता भी नहीं मिलता है। जहां भी जाइएगा, कोई न कोई ईश्वर बीच में आ जाएगा और कोई न कोई धर्म। और धर्म से आपका कोई संबंध न हो सकेगा। हिंदू बीच में आ जाएगा, ईसाई और मुसलमान और जैन और बौद्ध, कोई न कोई बीच में आ जाएगा। कोई न कोई दीवाल खड़ी हो जाएगी, कोई न कोई पत्थर बीच में अटक जाएगा और द्वार बंद हो जाएंगे। और ये द्वार परमात्मा से तो मनुष्य को तोड़ते ही हैं, मनुष्य को भी मनुष्य से तोड़ देते हैं।
मनुष्य को अलग करने वाला कौन है? एक मनुष्य और दूसरे मनुष्य के बीच
कौन सी दीवाले हैं? पत्थर की, मकानों की? नहीं। मंदिरों की, मस्जिदों की, धर्मों की, शास्त्रों की, विचारों की दीवालें हैं, जो एक-एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से अलग किए हुए हैं, और स्मरण रहे जो दीवालें मनुष्य और मनुष्य को ही दूर कर देती हों, वे दीवालें मनुष्य को परमात्मा से कैसे मिलने देंगी? यह असंभव है। यह असंभव है। अगर मैं आपसे दूर हो जाता हूं तो

यह कैसे संभव है कि जो चीज मुझे आपसे दूर कर देती हो, वह मुझे उससे जोड़ दे जो कि सबका नाम है। यह संभव नहीं है। लेकिन इसी तरह का ईश्वर, इसी तरह का धर्म, हजारों-हजारों बरसों से मनुष्य के मन पर छाया हुआ है। और यही कारण है कि पांच-छह हजार वर्षों के निरंतर, निरंतर चिंतन-मनन और ध्यान के बाद जीवन में धर्म का कोई अवतरण नहीं हो सका है। एक फॉल्स रिलीजन, एक मिथ्या धर्म हमारे और धर्म के बीच में खड़ा हुआ है। नास्तिक नहीं धर्म को रोक रहे हैं और न वैज्ञानिक रोक रहे हैं और न भौतिकवादी रोक रहे हैं, रोक रहे हैं वे लोग जिन्होंने धर्मों की ईजाद कर ली है। और तब हम उन ईजाद किए किसी न किसी धर्म की दीवाल में आबद्ध हो जाते हैं। कारागृह में बंद हो जाते हैं। और हमारे चित्त परतंत्र हो जाते हैं और उस स्वतंत्रता को खो देते हैं, जो कि सत्य की खोज की पहली शर्त है। ऐसा ईश्वर मर गया है, मर जाना चाहिए। न मरा हो तो जिन लोगों को भी ईश्वर से प्रेम है, उन्हें सहायता करनी चाहिए कि वह मर जाए, उसे दफना दिया जाना चाहिए। अगर समय रहते यह न हो सका तो सच्चे धर्म के अभाव में मनुष्य-जाति का क्या होगा, यह कहना बहुत कठिन है और बहुत दुर्भाग्यपूर्ण भी है वह घोषणा करनी और उस दिन की कल्पना भी मन को कंपाने वाली है।
आज भी मनुष्य का क्या हो गया है? आज भी मनुष्य क्या है? अगर पशु- पक्षियों में होश होगा तो वह आदमी को देख कर जरूर हंसते होंगे, उन्हें हंसी आती होगी। डार्विन ने कुछ वर्षों पहले लोगों को समझाया कि मनुष्य जो है, वह बंदर का विकास है। लेकिन एक बंदर ने मुझे बताया है कि मनुष्य जो है, वह बंदर का पतन है। डार्विन समझ नहीं पाया। बंदर हंसते हैं आदमी पर और सोचते हैं कि यह उनका पतन है। यह कुछ बंदर भटक गए हैं और आदमी हो गए हैं। और डार्विन को ख्याल था कि यह बंदरों का विकास है। यह केवल आदमी के अहंकार की भूल है--एक बंदर ने मुझे यह बताया है। यह जो आदमी की आज स्थिति है, यह कल और क्या होगी? और कौन इसे इस स्थिति को ऐसा बनाए हुए है?
स्मरण रखिए, बीमारियों से भी ज्यादा घातक वे दवाइयां हो जाती हैं, जो झूठी हों। स्मरण रखिए, समस्याओं से भी ज्यादा खतरनाक वे समाधान हो जाते हैं जो कि सच्चे न हों, क्योंकि समस्या तो एक तरफ बनी रहती हैं और समाधान दूसरी समस्याएं खड़ी कर देते हैं। इधर पांच हजार वर्षों में धर्म के नाम पर जो कुछ हुआ, उससे जीवन की कोई समस्या हल नहीं हुई, बल्कि और नई समस्याएं खड़ी हो गई हैं और हर समाधान अगर नई समस्याएं खड़ी कर देता हो तो ऐसे समाधानों से विदा लेने का समय आ गया है, उन्हें विदा दे देनी जरूरी है, क्योंकि बहुत सी व्यर्थ की समस्याएं उनके कारण खड़ी हुई हैं और समाधान तो कोई भी नहीं हुआ। मनुष्य ईश्वर के कितने निकट पहुंचा है? मंदिर तो बढ़ते जाते हैं, मस्जिद तो बढ़ती जाती हैं, गिरजे रोज नये-नये खड़े होते जाते हैं और ऐसा मालूम होता है कि अगर यह विकास इसी भांति चला तो आदमी के रहने के लायक मकान न बचेंगे, ईश्वर सब मकान घेर लेगा। लेकिन इन मंदिरों में, इन गिरजों में, इन मस्जिदों में होता क्या है? क्या मनुष्य के जीवन से कोई ईश्वर का संबंध वहां पैदा होता है? क्या मनुष्य के जीवन में कोई क्रांति वहां घटित होती है? क्या मनुष्य के जीवन का दुख और अंधकार वहां दूर होता है? क्या मनुष्य के जीवन की हिंसा और घृणा वहां समाप्त होती है? क्या मनुष्य के जीवन में प्रेम और प्रार्थना के गीत वहां पैदा होते हैं? क्या कोई सौंदर्य और क्या कोई सौंदर्य के फूल, मनुष्य के हृदय पर वहां पैदा होते हैं, बनते हैं और निर्मित होते हैं? नहीं, बिल्कुल नहीं। बल्कि वहां मनुष्य और मनुष्य के बीच घृणा पैदा होती है। क्रोध और हिंसा पैदा होती है। आज तक जितना संघर्ष, युद्ध और खूनपात मंदिरों के और मूर्तियों के नाम पर हुआ है और किस चीज के नाम पर हुआ है और मनुष्य की जितनी हत्या, मनुष्यों के द्वारा निर्मित धर्मस्थानों को लेकर हुई है और किसी बात से हुई है? अगर हम अब भी इस बात को कहे चले गए कि हम इन्हीं स्थानों को धर्मस्थान मानते रहेंगे तो निश्चित मानिए, धर्म के अवतरण की फिर कोई संभावना नहीं है।
एक छोटी सी कहानी मुझे स्मरण आती है, वह मैं आपसे कहूं।
एक चर्च के द्वार पर सुबह-सुबह एक आदमी ने आकर दस्तक लगाई। मैं तो उसे आदमी कह रहा हूं, लेकिन चर्च में जो लोग रहते थे, वे उसे आदमी नहीं समझते

थे, क्योंकि मंदिरों ने आदमियों और आदमियों में फर्क पैदा कर रखा है। वह आदमी काले रंग का था और जिनका मंदिर था और जिनका परमात्मा था, वे सफेद रंग के लोग थे। उस मंदिर के पुरोहित ने उस काले आदमी को कहाः यहां कैसे आए? उसने कहाः मैं परमात्मा की खोज में आया हूं। उस पुरोहित ने उसे नीचे से ऊपर तक देखा। काला आदमी है और सफेद आदमियों के परमात्मा के मंदिर में आया? यह बिल्कुल समझ में आने वाली बात नहीं है। लेकिन पुराने दिन होते तो उसने तलवार निकाल ली होती और उससे कहा होता--यहां से हट जाओ। तुम्हारी छाया पड़नी भी खतरनाक है। लेकिन दिन बदल गए और भाषाएं बदल गईं। उस पुरोहित ने बहुत प्रेम से कहा और कहाः मेरे भाई, मंदिर में आने से क्या होगा? जब तक तुम्हारा हृदय शांत न हो और तुम्हारा मन विकारों से मुक्त न हो, तब तक मंदिर में आकर क्या करोगे? परमात्मा तो केवल उन्हें मिलता है, जिनके हृदय शांत होते हैं और विकार से मुक्त होते हैं। तो तुम जाओ, पहले हृदय को पवित्र करो और फिर आना। उस पुरोहित ने सोचा होगा, न होगा हृदय पवित्र और न यह वापस आएगा। लेकिन यह बात उसने सफेद चमड़ी के लोगों से कभी भी नहीं कही थी। यह तो इस आदमी को इस मंदिर से दूर रखने का उपाय था। वह काला आदमी चला गया। कई महीनों के बाद रास्ते के चौराहे पर, उस पुरोहित को वह दिखाई पड़ा। वह बहुत मगन, बहुत आनंदित और उसकी आंखों में कोई रोशनी झलकती थी। उस पुरोहित ने पूछा कि तुम दुबारा नहीं आए? उसने कहा कि मैं क्या करता? मैंने मन को पवित्र करने की कोशिश की, मुझसे जो बन पड़ता था, वह मैंने किया। मैं शांत हुआ, मैंने एकांत खोजा, और एक दिन रात परमात्मा ने मुझे सपने में दर्शन दिए और उसने कहा कि तू किसलिए पवित्र होने की कोशिश कर रहा है? मैंने उससे कहा कि वह जो मंदिर है हमारे गांव में, वह जो चर्च है, मैं उसमें प्रवेश पाना चाहता हूं और उसके पुरोहित ने कहा है, पहले पवित्र हो जाओ, तब आने के लिए द्वार खुल सकेगा। परमात्मा यह सुन कर हंसने लगा और उसने कहा कि तू बिल्कुल पागल है। कोशिश छोड़ दे। दस साल से मैं खुद ही उस चर्च में घुसने की कोशिश कर रहा हूं। वह पुजारी मुझे घुसने ही नहीं देता। मैं खुद ही सफल नहीं हो सका हूं और निराश हो गया हूं, तू भी वहां प्रवेश नहीं पा सकेगा। और यह बात एक मंदिर के बाबत नहीं, सभी मंदिरों के बाबत है। और यह बात
एक पुजारी के संबंध में नहीं, सभी पुजारियों के संबंध में है। जहां भी मंदिर हैं और जहां भी पुजारी हैं, वहां उन्होंने परमात्मा को कभी प्रवेश नहीं पाने दिया और न वे पाने देंगे, क्योंकि परमात्मा और पुजारी दोनों एक साथ नहीं चल सकते। परमात्मा प्रेम है, पुजारी व्यवसाय है। प्रेम और व्यवसाय का क्या संबंध? जहां पुजारी है, वहां दुकान है, वहां मंदिर कैसे हो सकता है? लेकिन अपनी उन दुकानों को, उन्होंने मंदिर बना रखा है और उन दुकानों के ग्राहकों को, दूसरी दुकानों के खिलाफ, बहुत घृणा से भर रखा है, ताकि वे उनकी दुकानों को छोड़ कर, दूसरी दुकानों पर न चले जाएं इसलिए एक मंदिर दूसरे मंदिर के विरोध में है और एक मंदिर का परमात्मा दूसरे मंदिर के परमात्मा के विरोध में है। क्या यह धर्म की स्थिति है? और क्या इसके द्वारा धर्म को गति मिली है, प्राण मिले हैं? धर्म निष्प्राण हुआ है। इस भांति का ईश्वर मर गया हो, इससे ज्यादा सुखद सुसमाचार और दूसरा नहीं हो सकता। लेकिन अगर वह मर भी गया हो तो पुजारी इसकी खबर आपको पता नहीं चलने देंगे, क्योंकि यह आपको पता चल जाना बहुत खतरनाक होगा। इसलिए वह उस मरे हुए ईश्वर के आस-पास भी मंत्र पढ़ते रहेंगे और पूजा करते रहेंगे। इसलिए नहीं कि परमात्मा से उन्हें बहुत प्रेम है, बल्कि इसलिए कि उनके जीवन का आधार यही पूजा है। वे इसी से जीते हैं। यही उनकी आजीविका है।
जिन लोगों ने परमात्मा को आजीविका बनाया, उन लोगों ने ही मनुष्य को परमात्मा से दूर करने के उपाय किए। तो जहां भी परमात्मा आजीविका बन गया हो, जान लेना कि वहां परमात्मा नहीं हो सकता है। परमात्मा प्रेम है और प्रेम का व्यवसाय नहीं हो सकता। उसकी आजीविका नहीं हो सकती। प्रार्थना बेची नहीं जा सकती और प्रार्थना दूसरे के लिए की भी नहीं जा सकती और प्रेम में कोई मध्यस्थ नहीं होता है और न कोई दलाल होता है। जहां दलाल हों और मध्यस्थ हों, वहां प्रेम असंभव है। वहां सौदा होगा, बार्गेन होगा, प्रेम नहीं हो सकता। प्रेम सीधा होता है। प्रेम के बीच में कोई भी मौजूद नहीं

होता। परमात्मा और मनुष्य के बीच में जिस दिन से पुजारी मौजूद हुआ, उसी दिन से सारी बात खराब हो गई। ऐसा परमात्मा मर जाए, इससे ज्यादा शुभ कुछ भी नहीं है, क्योंकि ऐसा परमात्मा जिंदा ही नहीं है। और इसकी मृत्यु से, उस परमात्मा के जीवन की तरफ हमारी आंखें उठनी शुरू होंगी जो कि वस्तुतः जीवन है, महा जीवन है, परम जीवन है। हिंदू, मुसलमान, ईसाई और जैन और बौद्ध और इस तरह के सभी नाम, दुनिया से विदा होने चाहिए, तो दुनिया में धर्म का जन्म हो सकता है और इसी भांति शास्त्रों, शब्दों और सिद्धांतों का ईश्वर भी मर गया है। वह भी सच्चा ईश्वर नहीं है। शब्द, शास्त्र और सिद्धांत मनुष्य के चित्त और बुद्धि के अनुमानों से ज्यादा नहीं है। वे अंधेरे में फेंके गए उन तीरों की भांति हैं, जो लग भी जाते हों तो भी उनके लगने का कोई अर्थ नहीं है। उनका लग जाना बिल्कुल सांयोगिक है।
मनुष्य सोचता रहा है, जीवन में जहां-जहां अज्ञान है और अंधेरा है, मनुष्य विचार करता रहा है, अनुमान करता रहा है। अनुमानों के बहुत शास्त्र, सारी जमीन पर इकट्ठे हो गए हैं। इन अनुमानों में, इन कल्पनाओं में, इन धारणाओं में कोई सत्य नहीं है, कोई ईश्वर नहीं, क्योंकि ईश्वर का अनुभव तो वहीं शुरू होता है, जहां सब अनुमान, सब विचार, सब धारणाएं शांत हो जाते हैं। जहां चित्त, मौन और निर्विचार को उपलब्ध होता है, वहीं वह सत्य को जानने में समर्थ होता है। जहां सारे शास्त्र शून्य हो जाते हैं, वहीं उसका उदघाटन होता है जो सत्य है।
इसलिए शब्दों में जो भटके हों, शब्दों को जिन्होंने पकड़ रखा हो, शास्त्रों को जिन्होंने अपनी आत्मा समझ रखी हो, उनका सत्य से कोई संबंध न हो सकेगा। अनुमान करने में मनुष्य की बुद्धि प्रखर है, तीव्र है और अनुमान के द्वारा अपने अज्ञान को ढंक लेने में भी हम बहुत होशियार हैं। जहां-जहां अज्ञान है, वहां-वहां हम कोई अनुमान कर लेते हैं, कोई कल्पना कर लेते हैं और धीरे-धीरे उस कल्पना पर विश्वास करने लगते हैं। क्यों? क्योंकि उस कल्पना पर विश्वास कर लेने से हमारे अज्ञान का बोध नष्ट हो जाता है। हमें लगता है कि हम जानते हैं। जिस मनुष्य को यह लगता हो कि मैं जानता हूं ईश्वर को, वह ईश्वर को कभी न जान सकेगा। वह ईश्वर को कभी भी नहीं जान सकेगा क्योंकि उसका जानना निश्चित ही किन्हीं शास्त्रों और सिद्धांतों की पकड़ पर निर्भर होगा। कुछ उसने सीख लिया होगा, कुछ उसने समझ लिया होगा, कुछ उसने स्मरण कर लिया होगा, वही उसका ज्ञान बन गया होगा। ऐसा ज्ञान नहीं, बल्कि ऐसा अज्ञान कि मैं जीवन-सत्य के संबंध में कुछ भी नहीं जानता हूं। इस बात का बोध कि मुझे जीवन-सत्य के संबंध में कुछ भी पता नहीं, कुछ भी ज्ञात नहीं, ऐसी इग्नोरेंस का स्पष्ट, स्पष्ट अहसास, ऐसी प्रतीति कि मुझे पता नहीं है, मनुष्य के चित्त को शब्दों के भार से मुक्त कर देती है और वह मौन पैदा होता है, जो उसे जानने की तरफ ले जा सकता है।
किसी ने यह घोषणा कर दी एथेंस में कि सुकरात सबसे बड़ा ज्ञानी है। लोग सुकरात के पास गए और उन्होंने सुकरात से कहा कि लोगों ने घोषणा की है कि तुम सबसे बड़े ज्ञानी हो। सुकरात हंसा और उसने कहाः उनसे जाओ, और कहना कि जब मैं युवा था तो मुझे ऐसा भ्रम था कि मैं ज्ञानी हूं। फिर जैसे-जैसे मेरी उम्र बढ़ी, मेरा ज्ञान बिखरता गया और पिघलता गया और बह गया है। अब जब कि मैं मौत के करीब आ गया हूं और अब जब मुझे कोई भी किसी से डर नहीं है, मैं एक सच्ची बात कह देना चाहता हूं कि मैं कुछ भी नहीं जानता हूं जाओ और उन लोगों को कह दो कि सुकरात तो कहता है कि वह महाअज्ञानी है।
वे लोग गए और उन्होंने जाकर, जो लोग इसकी घोषणा गांव में करते फिरते थे, उनसे जाकर कहा कि सुकरात तो कहता है कि वह महा अज्ञानी है।
उन्होंने कहाः इसीलिए, इसीलिए तो हम कहते हैं कि उसको परम ज्ञान उपलब्ध हुआ है, क्योंकि जो यह कहने में समर्थ हो गया है और जो इस सत्य को जानने में समर्थ हो गया है कि मैं कुछ भी नहीं जानता हूं। इस शांत, और मौन, इस इनोसेंट, इस निर्दोष स्थिति में ही जानने के द्वार खुल सकते हैं। जिसको यह ख्याल हो कि मैंने जान लिया है, उसका तो अहंकार और मजबूत हो जाएगा। ज्ञानियों के अहंकार से ज्यादा बड़ा अहंकार और किसी का भी नहीं होता है। उनकी तो ईगो, उनका तो "मैं" भाव कि "मैं" कुछ हूं" और भी प्रबल हो जाएगा और

जिसको यह वहम हो जाए कि मैं हूं वह परमात्मा से नहीं मिल सकेगा, क्योंकि परमात्मा में मिलने की पहली शर्त यह है कि जैसे बूंद अपने को सागर में खो देती है, ऐसे ही कोई अपने अहंकार को सर्व के साथ निमज्जित कर दे, सर्व के साथ खो दे। वह जो चारों तरफ फैला हुआ विस्तार है, वह जो असीम और अनंत सत्ता है चारों ओर, उसमें अपने को डुबा दे और खो दे।
सुकरात ने कहा कि मैं महा अज्ञानी हूं। क्या आप भी किसी क्षण में इस बात को अनुभव कर पाते हैं कि आप महा अज्ञानी हैं? अगर कर पाते हैं तो किसी न किसी दिन परमात्मा वह क्षण निकट लाएगा, जब ज्ञान का जन्म हो सके। लेकिन अगर आप भी अपने मन में यह दोहराते हों कि मैं जानता हूं तो स्मरण रखना, यह जानने का भ्रम कभी भी नहीं जानने देगा।
ज्ञानियों का ईश्वर मर गया है। उनका ईश्वर, जिनको यह ख्याल है कि हम जानते हैं। पंडितों का ईश्वर मर गया है। अब तो उन लोगों के ईश्वर के लिए इस जगत में जगह होगी, जिनके हृदय बच्चों की तरह सरल हों और जो यह कह सकें कि हम नहीं जानते हैं और उस न जानने के बिंदु से जिनकी खोज शुरू हो सके, जो न जानने के स्थान से खोज कर सकें और यात्रा कर सकें। सच तो यह है इंक्वायरी या कोई भी खोज तभी प्रारंभ होती है, जब न जानने का भाव गहरा और प्रबल हो जाए। जब जानने का भाव गहरा हो जाता है तो खोज बंद हो जाती है, टूट जाती है, समाप्त हो जाती है।
लेकिन हम सभी लोग कुछ न कुछ जानने के ख्याल में हैं, अगर हमने गीता स्मरण कर ली है या कुरान या बाइबिल या कोई और शास्त्र और अगर हमें वे शब्द पूरी तरह कंठस्थ हो गए हैं और जीवन जब भी कोई समस्याएं खड़ी करता है तो हम उन सूत्रों को दोहराने में सक्षम हो गए हैं और अगर हमें इस भांति ज्ञान पैदा हो गया है तो हम बहुत दुर्दिन की स्थिति में हैं, बहुत दुर्भाग्य है। यह ज्ञान खतरनाक है। यह ज्ञान कभी सत्य को नहीं जानने देगा और कभी ईश्वर को नहीं जानने देगा, कभी ईश्वर से यह ज्ञान संबंधित नहीं होने देगा। यह ज्ञान जो शब्दों से और शास्त्रों से आता है, ज्ञान ही नहीं है। यह अज्ञान को छिपा लेने के उपाय से ज्यादा नहीं है। हां, यह हो सकता है कि इस अज्ञान में भी कभी-कभी कोई तीर लग जाता हो, कहीं ठीक जगह। यह हो सकता है। कभी-कभी तो पागल भी ठीक उत्तर दे देते हैं। और कभी-कभी तो अनुमान भी अंधेरे में सच्चाइयां साबित हो जाते हैं। लेकिन उन पर कोई जीवन खड़ा नहीं हो सकता। मैंने सुना है, एक गांव में एक स्कूल के निरीक्षण के लिए एक इंस्पेक्टर आया। खबर उसके पहले ही उस गांव में आ गई थी कि उस इंस्पेक्टर का दिमाग खराब हो गया है। लेकिन सरकारी काम था, और जैसे कि सभी सरकारी काम होते हैं। यह खबर मिल जाने पर भी कि उसका दिमाग खराब हो गया है, अभी उसकी चिकित्सा की व्यवस्था होने में काफी देर थी या उसे नौकरी से निवृत्त करने में भी अभी काफी देर थी। वह पागल हो गया था, लेकिन अपने काम को जारी रखे हुए था, बल्कि और भी मुस्तैदी से। पागल काम करने में बड़े कर्मठ हो जाते हैं। वे जो भी करते हैं पूरी ताकत से करते हैं। वह और भी जोर से निरीक्षण करने लगा था। अब वह बैठता ही नहीं था घर पर। वह गांव-गांव निरीक्षण करता घूमता था और हर स्कूल के रजिस्टर में उस स्कूल का रिकॉर्ड खराब करता था, क्योंकि उसके प्रश्नों के उत्तर देने बिल्कुल असंभव थे।
वह उस गांव में भी आया, जिसकी मैं बात कर रहा हूं--उस गांव का अध्यापक डरा हुआ था, प्रधान अध्यापक डरा हुआ था, बच्चे डरे हुए थे कि क्या होगा! वह आया और जो सबसे बड़ी कक्षा थी उस स्कूल की, उसमें जाकर उसने कुछ प्रश्न पूछे। सबसे पहले उसने यह कहा कि जो प्रश्न मैं पूछ रहा हूं, इसका कोई भी अब तक उत्तर नहीं दे पाया है। अगर तुम बच्चों में से किसी ने भी इसका उत्तर दे दिया तो फिर मैं दूसरा प्रश्न नहीं पूछूंगा, क्योंकि एक चावल को ही परख लेना काफी होता है। बाकी चावलों के पके होने का पता चल जाता है। अगर तुम इसका उत्तर न दे सके तो मैं और प्रश्न भी पूछूंगा, लेकिन वे फिर इससे भी ज्यादा कठिन। उसने प्रश्न पूछा। उसने पूछा कि दिल्ली से एक हवाई जहाज कलकत्ते की तरफ उड़ा। वह घंटे भर में दौ सौ मील चलता है, तो क्या तुम हिसाब लगा कर बता सकते हो कि मेरी उम्र क्या है?

सारे बच्चे घबड़ा गए। बच्चे क्या, बूढ़े होते तो वे भी घबड़ा जाते। इससे कोई संबंध नहीं था। प्रश्न बिल्कुल असंगत था। उसमें कोई संबंध ही नहीं था। दिल्ली से हवाई जहाज जाए कलकत्ता, किसी रफ्तार से जाए, इससे क्या संबंध था उसकी उम्र का? लेकिन बड़ी और हैरानी की बात हुई कि एक बच्चे ने हाथ हिलाया उत्तर देने के लिए। तब तो अध्यापक और प्रधानाध्यापक और भी हैरान हुए। उसका प्रश्न तो पागलपन का था, लेकिन एक बच्चा उत्तर देने को भी राजी था। जब उसने हाथ हिलाया था, इंस्पेक्टर बहुत खुश हुआ और उसने कहा कि यह पहला मौका है कि ऐसा बुद्धिमान बच्चा मुझे मिला, जिसने हाथ हिलाया उत्तर देने के लिए--खड़े हो और उत्तर दो।
उस बच्चे ने कहाः यह उत्तर मैं ही दे सकता हूं और आप सारी जमीन पर घूम लेते तो भी यह उत्तर नहीं मिल सकता था। जैसे आपका प्रश्न, आप ही कर सकते हैं, यह उत्तर भी सिर्फ मैं ही दे सकता हूं।
उस इंस्पेक्टर ने कहा कि कितनी है मेरी उम्र?
उस लड़के ने कहाः आपकी उम्र चवालीस वर्ष है।
वह इंस्पेक्टर हैरान हो गया। उसकी उम्र चवालीस वर्ष थी। उसने कहाः किस विधि से तुमने यह गणित हल किया?
उसने कहाः बहुत आसान है। मेरा बड़ा भाई आधा पागल है, उसकी उम्र बाइस वर्ष है, तो बिल्कुल ही आसान सवाल है, आपकी उम्र चवालीस वर्ष होनी ही चाहिए।
यह ईश्वर के संबंध में, आत्माओं के संबंध में, परलोक, स्वर्ग और नरक और मोक्ष के संबंध में जो प्रश्न पूछे गए हैं, वह इस पागल के प्रश्न से भी ज्यादा असंगत हैं। और इनके उत्तर देने वाले भी मिल गए हैं। यह कितनी असंगत बात है कि हम पूछें ईश्वर कैसा है? कहां है? कहां रहता है? हम, जिन्हें अपना भी पता नहीं, हम ईश्वर के संबंध में यह प्रश्न पूछें! हम जिन्हें यह भी पता नहीं कि हम कहां हैं, कौन हैं, क्या हैं, हम यह पूछें कि ईश्वर क्या है, कैसा है, बिल्कुल ही असंगत है।
लेकिन हमारे ये प्रश्न चाहे असंगत हों, इनके उत्तर देने वाले लोग भी मौजूद हैं, जो बताते हैं कि ईश्वर कहां है। उन्होंने नक्शे भी बनाए हैं और उन्होंने किताबें भी छापी हैं और उसमें उसका सब पता-ठिकाना दिया हुआ है। पुराने जमाने में फोन नंबर नहीं होते थे, इसलिए उन्होंने नहीं लिखा। अगर वे अब फिर से नये संस्करण निकालेंगे अपनी किताबों के तो उसमें फोन नंबर भी होगा। और फिर वहां जाने की भी बहुत जरूरत नहीं है, आप घर से ही बात भी कर ले सकते हैं। उन्होंने फासले तक बताए हैं। स्वर्ग के रास्ते और नरक के रास्ते बनाए हैं और नक्शे बनाए हैं और मंदिरों में वे नक्शे टंगे हुए हैं उन्होंने और इन सारी बातों पर अगर नक्शा बनाने वालों में विरोध है, होना स्वाभाविक है, क्योंकि यह तय करना कठिन है कि किसका नक्शा ठीक है।
अगर इन संबंधों में कि ईश्वर की शक्ल कैसी है, स्वभावतः चीनी में और भारतीय में झगड़ा होना स्वाभाविक है, क्योंकि चीनी जो शक्ल बनाएगा, वह चीन के आदमी जैसी होगी और भारतीय जो शक्ल बनाएगा वह भारतीय आदमी जैसी होगी और नीग्रो जो शक्ल बनाएगा, उसमें वह पतले ओंठ नहीं लगा सकता। उसके बाल घुंघराले होंगे, शक्ल काली होगी और होंठ वैसे होंगे जैसे नीग्रो के होते हैं। तो झगड़ा होना स्वाभाविक है कि ईश्वर के ओंठ कैसे हैं। तो भारतीयों का उत्तर दूसरा होगा, और नीग्रो का उत्तर दूसरा और चीनी का उत्तर दूसरा। यह बिल्कुल स्वाभाविक है। और इन झगड़ों को तय करने का, तय करने का रास्ता फिर एक ही रह जाता है कि कौन कितनी जोर से तलवार चला सकता है और कितने जोर से लोगों को मार सकता है जो जितना ज्यादा जोर से मार सकता है और मारने में जीत सकता है, उसका उत्तर सही है।
तो उस स्कूल के इंस्पेेेेक्टर पर मत हंसिए। सारी दुनिया के इतिहास पर हंसिए, पंडितों पर हंसिए, उत्तर के सही होने का सबूत क्या है? सबूत यह है कि हम सात करोड़ हैं और तुम बीस करोड़। सबूत यह है कि अगर तुम लड़ोगे तो हम तुम्हारी हत्या कर देंगे। तुम हमारी नहीं कर पाओगे। इसलिए हम सही हैं। इसलिए तो सारी दुनिया के धर्म अपनी संख्या बढ़ाने के लिए पागल हैं, क्योंकि संख्या बल है और सत्य की गवाही में संख्या के सिवाय और कौन सा बल है? इसलिए

सारे दुनिया के धर्म-पुरोहित, राजाओं को दीक्षित करने के लिए दीवाने और पागल रहे हैं वह इसलिए कि राजा के पास बल है और जो राजा जिस धर्म में दीक्षित हो जाएगा, वह धर्म सत्य हो जाएगा।
और लड़ कर जो लोग यह तय करना चाहते हों कि कुरान सही है कि बाइबिल, कि गीता, उनसे ज्यादा पागल और कौन होगा? लड़ कर जो यह तय करना चाहते हों कि कौन सही है। लड़ाई क्या किसी बात की सचाई का सबूत है या कि जीत जाना कोई सचाई का सबूत है?
लेकिन इन उत्तरों का जो कि भिन्न-भिन्न होना स्वाभाविक है, क्योंकि
वह मनुष्य की कल्पना से निकले हैं और मनुष्य के अपने अनुभव से निकले हैं। अगर आप तिब्बतियों से पूछें कि नरक में क्या है, तो वे कहेंगे कि नरक में बहुत ठंड है, बहुत शीत है, क्योंकि तिब्बत ठंड से परेशान है, शीत से परेशान है। तो जो-जो तिब्बत में पाप करते हैं, उनको और ठंडी जगह में भेजना बिल्कुल स्वाभाविक है। यह बिल्कुल अनुभव की बात है कि उनको और ठंडी जगह में भेज दो जो पाप करते हैं।
लेकिन भारतीयों से पूछिए कि तुम्हारा नरक कैसा है, तो वहां पर आग की लपटें जल रही हैं, कड़ाहे जल रहे हैं, और उन कड़ाहों में, जलते हुए कड़ाहों में लोगों को डाला जा रहा है। क्योंकि हम गर्मी से परेशान हैं। सूरज तप रहा है, तो हमारा नरक गरम होगा, यह बिल्कुल स्वाभाविक है। यह हमारा अनुमान बिल्कुल स्वाभाविक है। हम अपने पापी को ठंडी जगह नहीं भेज सकते। ठंडी जगह तो हम अपने मिनिस्टरों को भेजते हैं। ठंडी जगह तो हम अपनी राजधानियां बदलते हैं। पापियों को ठंडी जगह भेजेंगे तब तो बड़ी गड़बड़ हो जाएगी। पापियों को हम गरम जगह भेजेंगे। यह हमारी कामना गरम जगह भेजने की, उनको सताने की, हमारे नरक का निर्माण बन जाती है। नरक हमारा गरम हो जाता है। यह हमारा अनुमान है। इस अनुमान से नरक के होने का न पता चलता है कि वह गरम है या ठंडा है या है भी या नहीं। इससे केवल एक बात पता चलती है कि किस कौम ने और किस तरह के लोगों ने यह कल्पना की है।
तो हमारे शास्त्र यह नहीं बताते कि सत्य कैसा है, हमारे शास्त्र यह बताते हैं कि उनको बनाने वाले लोग कैसे हैं। हमारी कल्पनाएं सत्य के संबंध में यह नहीं बताती कि सत्य कैसा है, वे यह बताती हैं कि इसकी कल्पना करने वाले लोग किस स्थिति में हैं, किस मनोदशा में हैं वे लोग, उनकी सूचना मिलती है। और फिर हम इन पर लड़ाइयां लड़ते हैं, इन अनुमानों पर। और इन अनुमानों और शास्त्रों पर सारी दुनिया विभाजित खड़ी है और इन हवाई बातों पर हम एक दूसरे की हत्या करते रहे हैं। लेकिन हम लोगों को समझाते रहे हैं कि तुम मरो, फिकर मत करो। जो धर्म के लिए मरता है, वह स्वर्ग जाता है! और तब ऐसे नासमझ खोज लेने कठिन नहीं हैं, जो कि स्वर्ग जाने की उत्सुकता में जमीन को बर्बाद करने के लिए राजी हो जाएं और ऐसे पागल जमीन पर काफी हैं, जिन्हें शहीद होने में बहुत मजा आ जाए।
और यह सारा हमारा इतिहास, ऐसे झूठे ईश्वरों के आस-पास, इर्द-गिर्द निर्मित हुआ है। शब्दों के आस-पास, अनुमानों के आस-पास, सत्य के निकट नहीं है। सत्य के निकट कोई संगठन खड़ा नहीं हो सकता। संगठन हमेशा झूठ के करीब ही खड़े हो सकते हैं।
सत्य के इर्द-गिर्द कोई संगठन, कोई आर्गेनाइजेशन खड़ा नहीं हो सकता। नहीं हो सकता इसलिए कि सत्य का अनुभव अत्यंत व्यैक्तिक है। समूह से उसका कोई संबंध नहीं है। दस आदमी इकट्ठे बैठ कर सत्य का अनुभव नहीं कर सकते, भीड़ से उसका कोई वास्ता नहीं है। एक व्यक्ति अपने एकांत में, तनहाई में, अकेलेपन में अपने भीतर डूबता है, शांत होता है, मौन होता है और उसे जानता है। व्यक्ति और व्यक्ति ही केवल सत्य को जानते हैं, समूह और समाज नहीं। इकट्ठे होकर सत्य को नहीं जाना जा सकता। इकट्ठे होकर संगठन बनाया जा सकता है। लेकिन इकट्ठे होकर धर्म को नहीं पाया जा सकता।
संगठनों का ईश्वर मर गया है, मर जाना चाहिए। लेकिन धर्म का ईश्वर? वह बात ही और है। वही अकेला जीवन है। वही अकेला जीवन है। उसके अतिरिक्त तो सब मृत है, उसके अतिरिक्त तो कुछ है ही नहीं। उसको जानने के लिए संगठन में नहीं, साधना में जाना जरूरी है। साधना अकेले की बात है। संगठन, भीड़ और समूह

की। और हम सारे लोग अब तक धर्म को समूह और संगठन की बात समझते रहे हैं। हम समझते हैं कि हिंदू हो जाना धार्मिक हो जाना है। मुसलमान हो जाना, पारसी हो जाना धार्मिक हो जाना है। कैसी पागलपन की बातें हैं! किसी एक संगठन के हिस्से हो जाने से कोई धार्मिक होता है? धार्मिक होने का अर्थ ही कुछ उलटा है इससे। संगठन का हिस्सा होकर कोई धार्मिक नहीं होता। बल्कि संगठनों से जो मुक्त हो जाता है, वह धार्मिक हो जाता है। समाज का हिस्सा होकर कोई धार्मिक नहीं होता। लेकिन अपने चित्त में जो समाज से परिपूर्णतया स्वतंत्र हो जाता है, वही धार्मिक होता है। समाज और संगठन में तो हम किन्हीं और कारणों से इकट्ठे होते हैं। किसी भय के कारण, किसी सुरक्षा के लिए, किसी घृणा के लिए, किसी से लड़ने के लिए इकट्ठे होते हैं। इस भय के कारण कि मैं अकेला बहुत कमजोर हूं। मैं दस लोगों के साथ हो जाऊं।
एक फकीर को, मंसूर को फांसी लगाई जा रही थी। लोग उसके हाथ काट रहे थे। लाखों लोग इकट्ठे थे और पत्थर फेंक रहे थे। और वही व्यवहार कर रहे थे जो ईश्वर के आदमी के साथ हमेशा तथाकथित धार्मिक लोग करते हैं। उसकी आंखें फोड़ डाली थीं, उसके पैर काट डाले थे, उस पर पत्थर फेंक रहे थे। लेकिन वह मुस्कुरा रहा था और वह परमात्मा से प्रार्थना कर रहा था। लेकिन तभी एक फकीर ने भी, जो उस भीड़ में खड़ा था, एक मिट्ठी का ढेला उठा कर उसकी तरफ फेंका। मंसूर अब तक मुस्कुरा रहा था। उसकी आंखें फोड़ दी गई थीं, उनसे खून बह रहा था। उसके पैर काट दिए गए थे। वह मरने के करीब था। उस पर पत्थर मारे जा रहे थे, जो उसके शरीर को क्षत-विक्षत कर रहे थे, लेकिन वह हंस रहा था और उसकी आंखों में, उसके ओंठों पर, उसके हृदय में, इस सारी पीड़ा और दुख के बीच भी प्रार्थना और प्रेम था। लेकिन मिट्टी का एक ढेला एक फकीर ने भी फेंका, जो भीड़ में खड़ा था, और मंसूर रोने लगा। लोग बड़े हैरान हुए। और एक आदमी ने पूछाः तुम्हें इतना सताया गया, तुम नहीं रोए और एक छोटे से मिट्टी के ढेले को फेंकने से? उसने कहाः और सबको तो मैं सोचता था नासमझ हैं, इसलिए परमात्मा से उनके लिए प्रार्थना कर रहा था, इसलिए मुझे कोई दुख नहीं था। लेकिन एक आदमी यहां खड़ा है, फकीर! वह वस्त्र पहने हुए है परमात्मा के और उसने भी मुझे पत्थर मारा, तो मुझे हैरानी हुई। तो मेरी आंखों में आंसू आ गए कि जब फकीर भी पत्थर मारेगा फिर दुनिया का क्या होगा!
लेकिन फकीर तो बहुत दिन से पत्थर मार रहे हैं और इसलिए तो दुनिया का
यह हाल हो गया है, जो हुआ है। भीड़ बिखर गई है, वह आदमी मंसूर तो मर गया, उसकी सुवास तो उड़ गई। उस फकीर से कुछ दूसरे फकीरों ने पूछा कि तुमने पत्थर क्यों मारा? उसने कहाः भीड़ का साथ देने के लिए। अगर मैं भीड़ का साथ न देता तो लोग समझते कि पता नहीं यह भी मंसूर को पसंद करता है। उन फकीरों ने कहाः पागल, अगर साथ ही देना था तो उसका देना था जो अकेला था। साथ भी दिया उनका जो बहुत थे? उन फकीरों ने उससे कहाः तू फकीरी के कपड़े छोड़ दे, क्योंकि जो भीड़ से डरता है, वह धार्मिक नहीं हो सकता।
जो भीड़ से डरता है, वह कभी धार्मिक नहीं हो सकता। क्योंकि अगर भीड़ ही धार्मिक होती तो दुनिया में अधर्म कहां होता? अगर भीड़ ही धार्मिक होती तो फिर अधर्म और कहां होता? भीड़ तो अधार्मिक है। इसलिए जो भीड़ से भयभीत है, और भीड़ का अंग बना रहता है। वह कभी भी धार्मिक नहीं हो पाएगा। भीड़ से मन तो मुक्त होना चाहिए। इसका यह मतलब नहीं कि मैं आपसे यह कह रहा हूं कि आप भीड़ को छोड़ दें और जंगलों में चले जाएं। जमीन बहुत छोटी है, अगर सारे लोग जंगलों में चले गए तो वहां बस्तियां बस जाएंगी। उससे कोई फर्क न पड़ेगा। यह मैं नहीं कह रहा हूं कि आप गांव छोड़ दें और जंगलों में चले जाएं। कुछ लोगों ने यह गलती भी की है। जब उनको यह कहा जाता है कि तुम भीड़ से मुक्त हो जाओ तो भीड़ को छोड़ कर भागने लगते हैं।
भागने वाला कभी मुक्त नहीं होता। भागने वाला भी डरने वाला है।
अगर मुक्त होना है तो बीच में रहो और मुक्त हो जाओ। वह तो अभय का, फियरलेसनेस का सबूत होगा। दो तरह के लोग हैं। भीड़ में रहते हैं तो भीड़ से दब कर और डर कर रहते हैं। यही डरे हुए लोगों को जब कभी यह ख्याल पैदा होता है कि हम मुक्त हो जाएं तो यह जंगल की तरफ भागते हैं, क्योंकि वहां भीड़ ही नहीं रहेगी तो डराएगा कौन? सवाल यह नहीं है कि डराने वाला न हो। सवाल यह है

कि आप डरने वाले न रहें। इसलिए जंगल जाने से कुछ भी नहीं होगा। जो जंगल भागते हैं, भयभीत हैं, डरे हुए लोग हैं।
जिंदगी से भागने वाला धर्म सच्चा धर्म नहीं हो सकता।
जिंदगी के बीच, जहां जीवन चारों तरफ है, वहीं, वहीं मुक्त हुआ जा सकता है।
मुक्त होने का मतलब कोई शारीरिक और बाह्य मुक्ति नहीं है। मुक्त होने
का मतलब है मानसिक स्वतंत्रता। मुक्त होने का मतलब है मानसिक गुलामी को तोड़ देना। मुक्त होने का मतलब है भीड़ ने जो विश्वास दिए हैं, जो बिलीफ दी हैं, उनसे छूट जाना। भीड़ ने जो बातें पकड़ा दी हैं--हिंदू होना, मुसलमान होना, इस मंदिर को पवित्र मानना, उस मंदिर को पवित्र नहीं मानना, ये जो बातें पकड़ा दी हैं, ये जो शब्द पकड़ा दिए हैं, ये जो सिद्धांत पकड़ा दिए हैं, इनसे मुक्त हो जाना और मन की उस स्वतंत्रता को पाकर सत्य की निजी व्यैक्तिक खोज शुरू करनी।
जो व्यक्ति दूसरों से उधार सत्यों को स्वीकार करके चुप हो जाता है, उस आदमी की खोज सत्य के लिए नहीं, क्योंकि सत्य कभी भी उधार नहीं हो सकता, वह बारोड कभी भी नहीं हो सकता। जो भी चीज उधार ली जा सकती है, वह संसार की होगी। और जो चीज कभी उधार नहीं पाई जा सकती, वही केवल परमात्मा की हो सकती है। परमात्मा को उधार नहीं लिया जा सकता। परमात्मा कोई ऐसी चीज नहीं है, कि ट्रांसफरेबल हो कि मैंने आपको दे दी और आपने किसी और को दे दी। जीवन में जो भी श्रेष्ठ है, जीवन में जो भी सत्य है, जीवन में जो भी सुंदर है, जीवन में जो भी शिव है, वह कुछ भी एक हाथ से दूसरे हाथ में नहीं दिया जा सकता। उसे तो सीधे, स्वयं ही, अपनी खोज, अपने प्राणों के आंदोलन, अपने हृदय की प्रार्थनाओं, अपने जीवन की प्यास से ही पाना होता है। वह निजी और व्यैक्तिक खोज है।
समूह का ईश्वर मर गया है, मर जाने दें। सहारा दें कि वह मर जाए। व्यक्ति का, एक-एक इकाई का, एक-एक मनुष्य का ईश्वर ही सच्चा ईश्वर हो सकता है। संगठन का ईश्वर गया है, जाने दें। उसे रोकें न, घबड़ाएं न कि उसके जाने से दुनिया से धर्म चला जाएगा। उसके होने की वजह से दुनिया में धर्म नहीं आ सका है। उसे जाने दें।
और उस ईश्वर की आकांक्षा करें, उस ईश्वर की अभीप्सा करें, उस ईश्वर के लिए प्रार्थना और प्रेम से भरें, जो व्यक्ति का है, इकाई का है, समूह का और संगठन का नहीं। मर जाने दें हिंदू को, मुसलमान को। मर जाने दें जैन को, बौद्ध को, विदा हो जाने दें दुनिया से। कोई जरूरत नहीं है। एक-एक व्यक्ति के ईश्वर को और एक-एक व्यक्ति के धर्म को जन्म देना है। समूह के ईश्वर में बड़ी सुविधा है। आपको बिना खोजे धार्मिक होने का मजा आ जाता है। बिना जाने, जानने का सुख मिल जाता है। बिना धार्मिक हुए, धार्मिक होने का अहंकार तृप्त हो जाता है।
रोज सुबह उठ कर किसी मंदिर में हो आते हैं और अकड़ से चलते हैं कि मैं धार्मिक हूं। रोज सुबह किसी किताब को उठा कर पढ़ लेते हैं और जानते हैं कि मैं धार्मिक हूं। अगर यह रोज सुबह से, किताब को पढ़ने वाले लोग धार्मिक हैं, अगर ये रोज मंदिरों में जाने वाले लोग धार्मिक हैं तो यह दुनिया में इतना अधर्म क्यों है? यह अधर्म कहां से आ रहा है?
सच तो यह है कि जो आदमी एक ही किताब को पचास वर्षों तक रोज-रोज पढ़ता रहा है, मैं निवेदन करूंगा कि उसने उस किताब को एक भी दिन नहीं पढ़ा होगा, क्योंकि अगर पढ़ लिया होता, फिर दुबारा दोहराने की कोई जरूरत नहीं है। अगर उसने जान लिया होता तो दुबारा, दुबारा का कोई सवाल नहीं था। लेकिन उसे रोज दोहराता रहा है, मशीन की भांति, यंत्र की भांति। पहले दिन जब उसने पढ़ा होगा तब शायद कुछ समझा भी होगा। पचासवें वर्ष, पचास वर्ष तक पढ़ने के बाद वह जो पढ़ेगा, कुछ भी नहीं समझेगा, क्योंकि अब तो वह यंत्र की भांति दोहराने में समर्थ हो गया है। अब उसे किताब पढ़ने की जरूरत नहीं है। अब तो उसके पास शब्द इकट्ठे हो गए हैं, जिनको वह दोहरा ले सकता है। हमारा धर्म इन शब्दों का और संगठनों का धर्म रह गया है। ऐसे धर्म से मनुष्य के लिए कोई भविष्य नहीं है। ऐसे धर्म को जाने दें।

तो मैंने उस आदमी को उस पहाड़ पर कहा था, जरूर मर गया है ईश्वर, लेकिन यह चिंता की बात नहीं, यह खुशी का अवसर है। यह स्वागत के योग्य घटना है, क्योंकि इससे यह संभावना बनती है कि शायद हम उस ईश्वर को खोज सकें, जो कि वस्तुतः है, शायद हम उस धर्म को जान सकें। शायद हमारे प्राण उस धर्म की ओर गतिमान हो सकें जो कि जीवन को रूपांतरित कर दे। जिसके द्वारा जीवन प्रेम से और आनंद से भर जाए और आलोक से, तो हम कहेंगे, तो हम कहेंगे कि वह धर्म है और जिसके द्वारा जीवन इन सारी बातों से न भरा हो, और अंधकार अपनी जगह रहा हो और धर्म की पूजाएं और प्रार्थनाएं एक तरफ चलती रहीं हो और दुनिया की दीनता और दरिद्रता और दुख और दुर्भाग्य, कोई भी परिवर्तित न हुआ हो और मनुष्य वैसा का वैसा हो, वैसा का वैसा, जैसा हजारों-हजारों साल पहले था, ऐसे धर्म को, ऐसे धर्म को लेकर क्या करेंगे? ऐसे धर्म को जिंदा रख कर क्या करेंगे?
एक फकीर, एक सुबह, एक मस्जिद के पास से निकलता था। अंधा था, आंखें नहीं थीं। उसने मस्जिद के द्वार पर हाथ फैलाए और कहा कि मुझे कुछ मिल जाए। किसी राह चलते ने कहा कि तू पागल है? यह तो मस्जिद है। यहां क्या मिलेगा? यह तो परमात्मा का घर है, कहीं और मांग। वह फकीर भी अजीब रहा होगा। उसने कहा कि जब परमात्मा के घर से कुछ न मिलेगा तो फिर किस घर से मिलेगा? वह वहीं बैठ गया, वह अंधा आदमी और उसने कहा कि अब तो यहां से तभी विदा होऊंगा जब कुछ मिल जाए, क्योंकि यह तो आखिरी घर आ गया। अब इसके आगे घर कहां? और अगर यहां नहीं मिलने वाला है तो फिर हाथ फैलाए रखने व्यर्थ हैं! फिर अब आगे कहां जाऊं? यह तो अंतिम घर आ गया। इसके बाद और घर कौन सा है?
वह वहीं रुक गया। आंखें उसकी जरूर अंधी रही होंगी, लेकिन हमसे ज्यादा देखने की उसमें ताकत रही होगी। उसने अपने हाथ उठा दिए। एक वर्ष वह उस द्वार से नहीं हटा। दिन आए, गए! रातें आईं, गईं। वर्षा आई, बीत गई! मौसम आए और गए। चांद उगा और ढला। लोग हैरान थे, वह फकीर बैठा था, वहां बैठा था। कोई दे जाता था तो भोजन कर लेता था। कोई पानी दे जाता था तो पानी पी लेता था। लेकिन उस द्वार से नहीं हटा। और बरस पूरा होते-होते एक दिन सुबह लोगों ने देखा कि वह नाच रहा है और उसकी अंधी आंखों में भी एक अदभुत, अदभुत सौंदर्य की झलक मालूम हो रही है और उसके मुर्झाए चेहरे में कोई नया जीवन आ गया। और उसने लकड़ी फेंक दी और वह नाच रहा है, और वह कुछ गीत गा रहा है और कृतज्ञता के शब्द बोल रहा है।
लोगों ने पूछा, क्या हुआ है? उसने कहा अब यह मुझसे मत पूछो अब मुझे देखो और समझो। आप यह मुझसे मत पूछो कि क्या हुआ है? अब मुझे देखो और समझो। मेरी अंधी आंखों में दिखाई पड़ने लगा है। अब मैं देख रहा हूं। तुमको नहीं, बल्कि उसको, जो तुम्हारे भीतर है। अब मैं देख रहा हूं उसको, जिसकी खोज थी। और अब मैं देख रहा हूं कि कहीं कोई मृत्यु नहीं और अब मैं देख रहा हूं कि कहीं कोई दुख नहीं है और मैं देख रहा हूं कि मैं तो मिट गया हूं, लेकिन मिट कर भी मैंने कुछ पा लिया है, जो उससे बहुत ज्यादा बहुमूल्य है जो मैंने खोया है। मैंने ना-कुछ खोया और मैंने सब कुछ पा लिया है। लेकिन यह मुझसे मत पूछो। और लोगों ने देखा कि उससे पूछने की कोई भी जरूरत न थी। उसका आनंद कह रहा था। उसका संगीत कह रहा था। उसका गीत कह रहा था। उसका नृत्य कह रहा था। अगर दुनिया में धर्म होगा तो लोगों का आनंद कहेगा। लोगों का प्रेम कहेगा। लोगों के गीत कहेंगे। अभी तो लोगों के पास सिवाय आंसुओं के और कुछ भी नहीं और उनके हृदय में सिवाय अंधकार के और कुछ भी नहीं है और उनके मस्तिष्क सिवाय, सिवाय उलझन, तनाव और अशांति के किसी चीज से परिचित नहीं हैं। यह जमीन के लोगों का हाल है। इस हालत में कैसे धर्म हो सकता है?
इसलिए जो धर्म हैं, वे धर्म नहीं होंगे। लोगों के आंसू इसका सबूत हैं, उनका अंधकार इसका सबूत है। तो यह आंसुओं और अंधकार वाला ईश्वर मर गया है तो अच्छा। प्रकाश वाले ईश्वर का जन्म कैसे हो सकता है, यह आने वाली चर्चाओं में मैं आप से बात करूंगा। लेकिन एक बात कह दूं, मेरी बातों से उसका जन्म नहीं हो सकता। मेरी बातें उसके लिए ज्ञान नहीं बन सकती हैं। इसलिए और लोगों को आप सुनने जाते होंगे, वे देते होंगे आपको ज्ञान। मैं इन तीन दिनों में कोशिश करूंगा कि आपका सब ज्ञान छीन लूं और आप अज्ञानी हो

जाएं। परमात्मा करे, आपका सब ज्ञान छिन जाए और आप अज्ञान की सरलता में खड़े हो जाएं तो शायद, शायद उसे जान सकें, जो कि सत्य है।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना है, उससे बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं। और सबसे अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

क्या ईश्वर मर गया है?
दूसरा प्रवचन

जो मिटेगा, वही पाएगा

मेरे प्रिय आत्मन्!

कल संध्या एक बात मैंने आपसे कही है। उस संबंध में ही बहुत से प्रश्न उपस्थित हुए हैं। मैंने कल आपको कहाः ईश्वर मर गया है और यह घटना सौभाग्यपूर्ण है, क्योंकि जो ईश्वर मर गया है, वह ईश्वर ही नहीं था। जो मर सकता है, वह ईश्वर नहीं है। जो अमृत है, सदा है और शाश्वत है, वही ईश्वर है। लेकिन उस शाश्वत ईश्वर को जानने के लिए, ईश्वर को बनाना नहीं पड़ता है, वरन मनुष्य को स्वयं ही मिटना पड़ता है। उस शाश्वत ईश्वर को पाने के लिए मनुष्य को ईश्वर निर्मित नहीं करना होता है, वरन स्वयं को ही पिघला देना होता है और मिटा देना होता है। मनुष्य मिटता है तो ईश्वर उपलब्ध होता है। मनुष्य जब स्वयं को खोता है तो परमात्मा को पाता है। जो ईश्वर मर गया है, वह मनुष्य के द्वारा निर्मित ईश्वर था। मनुष्य ने जिसे बनाया है, वह मिटेगा। उस अनबनाए को, अनक्रिएटेड को जानना हो, जो कि नहीं मिटता है तो मनुष्य को स्वयं को खोना जरूरी है।
रामकृष्ण एक छोटी सी कहानी कहा करते थे। वह कहते थे, एक समुद्र के किनारे एक बार बहुत लोगों की भीड़ इकट्ठी हुई। कोई मेला था और वे सभी लोग यह विचार करने लगे कि समुद्र की गहराई कितनी है। और तभी एक नमक का पुतला भी वहां आया और उसने कहा कि ठहरो, मैं जाता हूं और गहराई का पता लगा कर अभी आता हूं। वह नमक का पुतला सागर में कूद गया फिर दिन आए और गए। सूरज उगा और डूबा। धीरे-धीरे मेला उजड़ गया, भीड़ छंट गई, लोग अपने घरों को वापस लौट गए। वह पुतला वापस नहीं लौटा। बहुत प्रतीक्षा रही कि वह लौटे और बताए कि सागर कितना गहरा है। लेकिन वह नहीं लौटा, वह नहीं लौट सकता था। अगर लौट आता तो उसका अर्थ होता कि सागर का उसके साथ स्पर्श नहीं हुआ और अगर सागर का स्पर्श हुआ और सागर की गहराई उसने जानी तो इस जानने में ही वह विलीन हो गया। नमक का पुतला था, खो गया!
मनुष्य भी परमात्मा में उतरते समय नमक के पुतले से ज्यादा नहीं है। सागर नमक से बना है, नमक सागर से बनता है। मनुष्य परमात्मा से बना है। यह मनुष्य खोजने जाएगा, परमात्मा को तो खो जाएगा, वैसे ही जैसे नमक का पुतला सागर में खो जाता है। इसलिए मनुष्य ने एक तरकीब ईजाद की ईश्वर से बचने की और वह यह है कि ईश्वर को खोजना उसने बंद कर दिया और ईश्वर का बनाना शुरू कर दिया। ऐसे मनुष्य बच गया और ईश्वर भी निर्मित कर लिया गया।
स्वभावतः बहुत प्रकार के ईश्वर निर्मित हो गए--हिंदू के, मुसलमान के, ईसाई के, जैन के, बौद्ध के। हजार-हजार प्रकार के ईश्वर निर्मित हो गए। अपनी-अपनी रुचि के भगवान सभी लोगों ने बना लिए। ये जो ईश्वर हैं, मैंने कल कहा, ये मर गए हैं, और यह शुभ है! तो मुझसे बहुत से प्रश्न पूछे हैं, जिनमें अधिक इसी बात से संबंधित हैं। उनका मैं पहले आपको उत्तर दूंगा।

पूछा है यहकैसे पता चला है कि यह ईश्वर मर गया?

मनुष्य को देख कर यह पता चलता है कि ईश्वर मर गया है। कहीं खोजने से ईश्वर की लाश नहीं मिलेगी और किसी कब्र पर लगा हुआ पत्थर नहीं मिलेगा कि यहां वह दफनाया गया है। और न जमीन के कोने-कोने में खोज लेने पर यह पता लगेगा कि कौन से लोग गवाह हैं जिनके सामने वह मरा हो। नहीं, ईश्वर के मर जाने की गवाही तो हम सारे लोग हैं, एक-एक आदमी। जीवन में इतना दुख, जीवन में इतना अंधकार, जीवन में इतनी पीड़ा और इतनी अशांति किस बात की सूचना है? इस बात की कि जो आनंद का स्रोत था, जो जीवन में प्रकाश का स्रोत था, उससे हमारे संबंध विच्छिन्न हो गए हैं। वह संबंध टूट गया है।
एक रात एक घर में एक अंधा आदमी मेहमान हुआ। आधी रात बीत जाने पर जब वह विदा होने लगा, तो घर के लोगों ने कहा, रास्ता अंधेरा है, अमावस की रात है,

तुम एक लालटेन हाथ में लेते चले जाओ। वह अंधा आदमी हंसने लगा, जैसा कि स्वाभाविक था। उसने कहा कि मेरे हाथ में लालटेन होने या न होने से क्या फर्क पड़ेगा? मैं तो अंधा हूं। रात अंधेरी है या उजाली और दिन है या रात, इससे भी फर्क नहीं पड़ता। मेरे लिए तो सब अंधेरा है और हाथ में लालटेन भी होगी तो क्या होगा? आकाश में सूरज होता है, तब भी कुछ नहीं होता। बात तो उसकी ठीक थी, लेकिन घर के लोग भी बड़े तार्किक थे। वह मानने को राजी न हुए। उन्होंने कहा कि यह तो सच है कि तुम्हारे हाथ में, तुम्हारी आंखों के लिए, लालटेन से कोई फर्क न पड़ेगा। लेकिन दूसरे अंधेरे में आते हुए लोगों को तो लालटेन दिखाई पड़ेगी, वह तो कम से कम तुमसे टकराने से बच जाएंगे। इतना भी क्या कम है? और इस दलील के सामने उस अंधे आदमी को हार जाना पड़ा, वह लालटेन लेकर निकला। लेकिन वह कोई सौ कदम ही गया होगा कि कोई आदमी उससे आकर टकरा गया। वह बहुत हैरान हुआ। उसने पूछा कि मेरे मित्र! क्या आप भी अंधे हो, मेरे हाथ की लालटेन दिखाई नहीं पड़ती? उस दूसरे आदमी ने कहाः महानुभाव! आपकी लालटेन बीच में कहीं बुझ गई है।
अंधे आदमी को कैसे पता चले कि लालटेन बुझ गई है। आप पूछते हैं कि हमें कैसे पता चले कि ईश्वर मर गया है! अंधे आदमी को कैसे पता चले कि लालटेन बुझ गई है। इस बात से पता चलेगा कि टक्कर हो गई। टक्कर हो गई है, इस बात का सबूत है कि लालटेन बुझ गई और हम सब की एक-दूसरे से टक्कर हो रही है। क्या यह ईश्वर के मर जाने का सबूत नहीं है? यह लालटेन के बुझ जाने का सबूत है। हम जिंदगी में कर क्या रहे हैं? जी रहे हैं या लड़ रहे हैं? प्रेम कर रहे हैं या क्रोध कर रहे हैं? एक-दूसरे को दे रहे हैं या छीन रहे हैं? एक-दूसरे के जीवन में सहयोगी हैं या शत्रु हैं? इस बात से सबूत मिलेगा कि ईश्वर मर गया है या नहीं मर गया। इसे पूछने किसी और से मत जाना कि ईश्वर मर गया है या नहीं मर गया? अपनी जिंदगी को देख लेना और अगर वह आस-पास टकराहट पैदा करती हो, घृणा पैदा करती हो, क्रोध और हिंसा पैदा करती हो तो जानना कि हाथ की लालटेन बुझ गई है। और हमारे संबंध टूट गए हैं जीवन के स्रोत से। इसे खोजने कहीं और जाने की किसी को भी कोई जरूरत नहीं है। तो मुझे कैसे पता चला कि ईश्वर मर गया है? आदमी को देख कर पता चलता है। आदमी ईश्वर की कब्र बन गया है। और क्या बड़ी खबर हो सकती है? और इससे बड़ी और क्या खबर हो सकती है कि आदमी एक मुर्दे की भांति जी रहा है। उसके भीतर राख है, और जीवन की कोई आग नहीं। उसके भीतर सब मुर्दा-मुर्दा है जीवन और जलता हुआ कुछ भी नहीं, सब बुझा-बुझा है। यह खबर है, यह सूचना है। और अगर यह भी सूचना नहीं है तो फिर अब और क्या सूचना इससे बड़ी हो सकती है?

पूछा है कि अगर ईश्वर मर गया है, तो क्या हम निराश हो जाएं?

नहीं। ईश्वर के मरने से निराश होने का कोई भी संबंध नहीं है। बल्कि, यदि झूठा ईश्वर, जिसे हम ईश्वर समझते रहे, समाप्त हो गया हो तो सच्चे ईश्वर की खोज शुरू हो सकती है। हीरों के दुश्मन पत्थर नहीं हैं, नकली हीरे हैं। पत्थरों ने हीरों से कोई दुश्मनी नहीं की है। उनसे उनका कोई नाता-रिश्ता ही नहीं है। नकली हीरे, हीरों के दुश्मन हैं। ईश्वर से उन लोगों का विरोध नहीं है जो कहते हैं ईश्वर नहीं है। ईश्वर की शत्रुता वे लोग कर रहे हैं, जिन्होंने झूठे ईश्वर गढ़ लिए हैं। उन्होंने मनुष्य को सच्चे ईश्वर तक जाने से हमेशा के लिए रोक लिया है। इसलिए नास्तिकों से मत घबड़ाना। नास्तिक तो एक दिन अपनी नास्तिकता की पीड़ा से ही आस्तिक हो जाएगा। कोई अगर नास्तिक है पूरा-पूरा तो बहुत दिन तक नास्तिक नहीं रह सकता। उसकी नास्तिकता ही उसे आस्तिकता में ले जाएगी, नास्तिकता तो सीढ़ी है। लेकिन जो झूठे आस्तिक हैं, वे कभी आस्तिक न हो सकेंगे, क्योंकि उन्हें नास्तिकता की सीढ़ी उपलब्ध नहीं हुई, जिसे पार करके कोई आस्तिक हो सकता है। जिसने कभी पूरे मन से ईश्वर की प्रचलित धारणाओं पर संदेह नहीं किया, वह आदमी कभी भी सच्चे ईश्वर की तरफ गतिमान नहीं हो सकेगा, क्योंकि संदेह ही वह शक्ति थी, जो झूठे ईश्वर को गिरा देती। उसने संदेह की उस शक्ति का प्रयोग नहीं किया।

उसने झूठे ईश्वर का ही विश्वास कर लिया, प्रचलित धारणा का विश्वास कर लिया, जैसे और सारे लोग विश्वास कर रहे हैं, उसने भी विश्वास कर लिया।

पूछा है एक प्रश्नः यदि हम इस तरह संदेह से भर जाएं, तब फिर विश्वास कैसे पैदा होगा?

क्या आपको यह पता नहीं है कि केवल उन्हीं लोगों के जीवन में और भाग्य में विश्वास की संपदा मिलती है, जो सम्यक रूप से संदेह करना जानते हैं। राइट डाउट करना जो जानते हैं, वे ही लोग विश्वास की संपदा को उपलब्ध होते हैं। वे लोग नहीं जो संदेह करने से डरते हैं, क्योंकि जो संदेह करने से डरता है, उसका विश्वास झूठा होगा। इसलिए वह संदेह करने से डरता है, क्योंकि वह जानता है कि संदेह किया कि विश्वास गया। इसलिए झूठे विश्वास वाले लोग लोगों को समझाते हैं, संदेह मत करना, क्योंकि संदेह की आग में उनके विश्वास, जो बिल्कुल कागजी हैं, जिंदा नहीं रह सकेंगे, जल जाएंगे। इसलिए जो भी यह समझाता हो कि विश्वास करो, संदेह नहीं, समझ लेना कि उसका विश्वास झूठा है। वह संदेह की अग्नि-परीक्षा में से गुजरने को राजी नहीं है। जो विश्वास संदेह की अग्नि-परीक्षा में से गुजरने को तैयार है, वही सत्य है। इसलिए इसके पहले कि आपके पास विश्वास आए, जान रखना कि संदेह की पगध्वनियां, उसके पहले सुननी जरूरी हैं। जो समग्र हृदय से संदेह करता है, उस संदेह में ही वे विश्वास जल जाते हैं जो असत्य हैं और केवल वे ही सत्य निखर कर वापस लौट आते हैं, जिन पर कि जीवन को आधारित किया जा सकता है और गतिमान किया जा सकता है। इसलिए संदेह से भयभीत मत होना। संदेह से जो भयभीत हो जाता है वह कभी धार्मिक नहीं हो पाएगा।

पूछा है कि मैंने कहा कि पुजारियों ने, पंडितों ने, धर्म-पुरोहितों ने, मनुष्य को ईश्वर की तरफ, ईश्वर के ज्ञान की तरफ जाने से रोका है, तो पूछा है कि क्या पुजारी कुछ भी नहीं जानते? क्या हजारों साल में उन्होंने कुछ भी नहीं जाना है? क्या वे बिल्कुल अज्ञानी हैं?

नहीं, पुजारी बहुत कुछ जानते हैं। यही तो खतरा है। अगर वे अज्ञानी होते तो इतना खतरा नहीं होता। वे बहुत कुछ जानते हैं, उनके जानने में ही खतरा है। एक छोटी सी कहानी कहूं, उससे मेरी बात शायद समझ में आ जाए।
एक राज-दरबार में सुबह ही सुबह दरबार भरता ही जाता था और एक अजनबी यात्री आया। वह किसी दूर देश का रहने वाला होगा। उसके वस्त्र पहचाने नहीं मालूम होते थे। उसकी शक्ल भी अपरिचित थी, लेकिन वह बड़ा गरिमाशाली और गौरवशाली व्यक्तित्व का धनी आदमी मालूम होता था। सारे दरबार के लोग देखकर उसकी तरफ देखते ही रह गए। उसने एक बहुत शानदार पगड़ी पहन रखी थी। वैसी पगड़ी भी उस देश में कभी नहीं देखी गई थी। उसमें बहुत रंग-बिरंगे छापे थे। ऊपर चमकदार चीजें लगी थीं। राजा ने पूछा कि अतिथि, क्या मैं पूछ सकता हूं, यह पगड़ी कितनी महंगी है और कहां से खरीदी गई? उस आदमी ने कहाः यह बहुत महंगी पगड़ी है। एक हजार स्वर्ण-मुद्राएं मुझे खर्च करनी पड़ी हैं। वजीर जो कि राजा की बगल में बैठा था। और वजीर जो कि स्वभावतः चालाक होते हैं, नहीं तो उन्हें कौन वजीर बनाएगा? उसने राजा के कान में कहाः सावधान! यह पगड़ी बीस-पच्चीस रुपये से ज्यादा की नहीं मालूम पड़ती। यह हजार स्वर्णमुद्राएं बता रहा है। इसके लूटने के इरादे हैं।
उस अतिथि ने भी, वजीर ने, जो कान में कहा, उसे वजीर के चेहरे से पहचान लिया होगा। वह अतिथि भी कोई नौसिखिया नहीं था। उसने बहुत दरबार देखे थे और बहुत दरबारों में वजीर और राजा देखे थे। वजीर ने जैसे ही अपना मुंह राजा के कान से दूर हटाया, वह नवागंतुक बोलाः क्या मैं फिर लौट जाऊं? मुझे कहा गया था कि इस पगड़ी को खरीदने वाला जमीन पर केवल एक ही सम्राट है, एक ही राजा है। क्या मैं लौट जाऊं इस दरबार से और समझ लूं कि यह दरबार, वह दरबार नहीं है जिसकी कि मैं खोज में हूं? मैं कहीं और जाऊं? मैं बहुत से दरबारों से वापस लौट आया हूं। मुझे कहा गया है कि एक ही राजा है जमीन पर जो इस पगड़ी को

एक हजार स्वर्ण-मुद्राओं में खरीद सकता है। तो क्या मैं लौट जाऊं, यह दरबार वह दरबार नहीं है?
राजा ने कहाः दो हजार स्वर्णमुद्राएं दो और पगड़ी खरीद लो। वजीर बहुत हैरान हो गया। जब वजीर चलने लगा तो उस आए हुए अतिथि ने वजीर के कान में कहा कि मित्र, यू मे बी नोइंग दि प्राइस ऑफ द टर्बन, बट आई नो दि वीकनेसेस ऑफ दि किंग्स। तुम जानते हो कि पगड़ी के दाम कितने हैं, लेकिन मैं राजाओं की कमजोरियां जानता हूं।
तो पादरी और पुरोहित और धर्मगुरु ईश्वर को तो नहीं जानते हैं, आदमी की कमजोरियां जानते हैं, आदमी की कमजोरियां जानते हैं और यही उनका खतरा है। उन्हीं कमजोरियों का शोषण चल रहा है और आदमी बहुत कमजोर है और बड़ी कमजोरियां हैं उसकी। और उनकी कमजोरियों का शोषण है।
और स्मरण रखें, जो परमात्मा की शक्ति को जानता है, उसके लिए इस जमीन पर कोई कमजोर नहीं रह जाता और जो परमात्मा को पहचानता है, उसके लिए शोषण असंभव है।
लेकिन मनुष्य का शोषण चल रहा है, धर्म के नाम पर, मंदिर और मस्जिद के नाम पर। और हजारों-हजारों वर्षों से यह शोषण चल रहा है। और हम, हम सब उस शोषण में सहभागी हैं। यह भी हो सकता है कि हम उस शोषण को न कर रहे हों, लेकिन अगर हम उस शोषण को अपने ऊपर होने दे रहे हैं तो हम उस शोषण को बनाए रखने में साथी हैं, संगी हैं और जमीन पर जो भी पाप हुए हैं, कोई यह न समझे कि वह उससे बच जाएगा। जमीन पर हुए पाप हम सबके सहभाग में घटित हुए हैं और जमीन पर जो कुछ हो रहा है, हम सब एक-एक आदमी उसके लिए जिम्मेवार है। कोई यह न सोचे कि वह बच जाएगा। कोई नहीं बच सकता। हम जाने-अनजाने साथ दे रहे हैं, हम सहयोगी हैं।
मनुष्य की कमजोरियों का शोषण राजनीतिज्ञ कर रहा है, धर्मगुरु कर रहा
है और-और न मालूम किस-किस तरह के लोग कर रहे हैं। लेकिन सबसे गहरा शोषण धर्मगुरुओं ने किया है। अभी राजनीतिज्ञ तो बहुत पीछे से आया है उस दौड़ में। बहुत पीछे से उसको यह बात समझ में आई कि यह धर्मगुरु क्या कर रहा है? राजनीतिज्ञ अभी पीछे-पीछे आया है और इसलिए पीछे-दिनों की जो राजनीति है, वह धर्मगुरु के विरोध में खड़ी है। उसका कोई और कारण नहीं है। दो चोर एक ही आदमी की संपत्ति पर आंख लगाए हुए हैं।
इसलिए पिछला जो राजनीतिज्ञ है, अभी-अभी, नया-नया, जो सारी दुनिया में राजनीति है, चाहे वह कम्यूनिज्म हो, चाहे वह फासिज्म हो, चाहे वह कुछ और हो, उस सब की टक्कर धर्मगुरु से है। क्यों है? एक ही आदमी पर दोनों का हमला है। दोनों का शिकार एक ही आदमी को बनना है, वही कमजोर आदमी। इन दोनों के बीच टक्कर पुरानी है, लेकिन अभी बहुत प्रगाढ़ हो गई है। और राजनीतिज्ञ धर्म को हटा देने की कोशिश में हैं। कई मुल्कों से उसने धर्म को हटा दिया है। मंदिरों से ईश्वर को विदा कर दिया है। उनकी जगह नये ईश्वर गढ़ने शुरू कर दिए हैं, नई मूर्तियां वहां स्थापित हो गईं हैं, नई प्रतिमाएं वहां बन रही हैं। लेकिन आदमी का शोषण जारी रहेगा, क्योंकि आदमी की कमजोरी बरकरार है। एक ने शोषण बंद किया तो दूसरा उस शोषण को शुरू कर देगा।
मैं आपसे यह निवेदन करना चाहता हूं कि धार्मिक लोग केवल वे ही हैं, जो मनुष्य की कमजोरी को समझें। और उस मनुष्य की कमजोरी के चल रहे शोषण के विरोध में एक विश्वव्यापी चेतना को जन्म दें। क्या है कमजोरी मनुष्य की? और किस-किस भांति उस कमजोरी का शोषण हो रहा है? इसे कुछ बहुत विस्तार में कहने की बात नहीं है। हम सब अपनी कमजोरी जानते हैं और उस कमजोरी के लिए क्या-क्या प्रलोभन हमें दिए जा सकते हैं, वह भी हम जानते हैं। हम आदमी की, मृत्यु की कमजोरी जानते हैं। हर आदमी मृत्यु से डरता है, इसलिए सभी धर्म, मृत्यु का बड़े पैमाने पर शोषण करते हैं। मनुष्य डरता है कि मैं मर न जाऊं तो धर्म समझाते हैं कि आत्मा अमर है, मरते हुए आदमी को बड़ी राहत मिलती है कि आत्मा अमर है, कोई फिकर नहीं। शरीर चला जाएगा, चले जाने दो। आत्मा तो बचेगी। मैं तो बचूंगा। हम सब बचना चाहते हैं।
यह जो हम विश्वास कर लेते हैं कि आत्मा अमर है तो यह मत समझना कि आपको पता चल गया है कि आत्मा अमर है। नहीं, आप मृत्यु से भयभीत हैं, इसलिए जल्दी

से विश्वास कर लिया है कि आत्मा अमर है। सबको पता है कि कोई नहीं मरना चाहता। इसलिए दुनिया के सभी धर्म-पुरोहित यह समझाने की कोशिश करते हैं, घबड़ाते क्यों हो--कोई मरता ही नहीं, आत्मा बिल्कुल अमर है। और यह मृत्यु से भयभीत मन विश्वास कर लेना चाहता है कि आत्मा अमर है। इसीलिए जवान आदमी जरा कम धार्मिक होता है, बूढ़ा आदमी ज्यादा धार्मिक हो जाता है। क्योंकि मौत जितने करीब आती है, उतना मृत्यु का भय करीब आता है और आत्मा की अमरता को मान लेने का मन तीव्र होने लगता है। जल्दी होती है कि मान लो, विश्वास कर लो। कोई नहीं मरना चाहता। यह कमजोरी है हमारे भीतर और इसीलिए जो कौम जितनी मृत्यु से भय करने वाली होती है, वह कौम उतनी ही आत्मा की विश्वासी होती है, अमरता की विश्वासी होती है।
हमीं हैं, जमीन पर और हमसे ज्यादा मौत से और कौन डरता होगा? लेकिन हमसे ज्यादा आत्मा की अमरता की घोषणा करने वाले लोग भी जमीन पर और कहीं नहीं हैं। इन दोनों बातों में संबंध है। यह दोनों बातें अलग-अलग नहीं हैं। ये दोनों बातें एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। तो शोषण है मृत्यु का, उसके भय का, आदमी असुरक्षित है, इनसिक्योरिटी है सब तरफ। कहीं कोई सुरक्षा नहीं मालूम होती, जिंदगी बहुत डांवाडोल है। कहीं कोई सहारा नहीं मिलता। आदमी बेसहारा है। आदमी का बेसहारा होना एक कमजोरी है। उस कमजोरी का शोषण धर्म करता है। पंडित, पुरोहित करता है, मंदिर और गिरजे करते हैं। वे कहते हैं, कोई फिकर न करो। बेसहारा कहां हो, भगवान का सहारा लो। भगवान का सहारा लो, भगवान का हाथ थामो। और चूंकि वे भगवान का हाथ थमाने में बीच में मध्यस्थ हैं, या जो भी उनकी दलाली हो, वह उनको दे दो। तुम भगवान का हाथ थाम लो। आदमी है अकेले में डरा हुआ। घबड़ाया हुआ, अकेले में भय मालूम होता है। जिंदगी बड़ी अकेली है। कोई संगी-साथी नहीं मालूम होता। क्षण आते हैं, जब पत्नी अपनी नहीं मालूम होती, लड़का अपना नहीं मालूम होता, मित्र अपने नहीं मालूम होते, कमजोरियां, बीमारियां आती हैं, मौत करीब आती है। तब लगता है, सब छूट जाएगा! धन-संपत्ति कोई अपना नहीं मालूम होता। तब पुरोहित पास में आता है और कहता है, मित्र, घबड़ाओ मत। परमात्मा साथी है, उसका नाम जपो। वह तो तुम्हारे साथ है, उसका नाम जपो और तब इस कमजोरी का शोषण किया जा सकता है। और यह जो परमात्मा का जाप, आप करने लगते हैं तो यह मत समझना कि परमात्मा से बहुत प्रेम आपको पैदा हो गया है, इसीलिए आप जाप कर रहे हैं। आप भयभीत हैं, जिंदगी में अकेलेपन से इसलिए परमात्मा का साथ खोज रहे हैं और ऐसे कोई साथ न मिलेगा, क्योंकि जो भयभीत है उसका प्रेम का कभी कोई संबंध नहीं हो सकता। जो अभय है, फियरलेसनेस में जिसका चित्त है, वही केवल प्रेम कर सकता है। भयभीत लोग कैसे प्रेम करेंगे? परमात्मा को कैसे प्रेम करेंगे? परमात्मा को कैसे जानेंगे? फियर तो कुछ भी जानने नहीं देता। लेकिन हमारे भय का शोषण किया जा रहा है, हमें समझाया जा रहा है भयभीत हो जाओ। गॉड फियरिंग बनो, ईश्वर से डरो, क्यों? क्योंकि अगर ईश्वर से नहीं डरोगे तो पुजारी से कैसे डरोगे, पंडित से कैसे डरोगे? धर्म-पुरोहित से कैसे डरोगे? ईश्वर से भयभीत हो जाओ और जितने भयभीत हो जाओगे, उतना ही शोषण किया जा सकता है। अभय व्यक्ति का कोई शोषण नहीं किया जा सकता है। लेकिन भयभीत व्यक्ति का शोषण किया जा सकता है। इसलिए धर्म के नाम पर बचपन से ही भय और भय सिखाया जाता है डरो, हर चीज से डरो, भयभीत हो जाओ। यह सब शोषण है, हमारी सारी कमजोरियों का शोषण है। यह जो नरक का डर है, हम सब डरे हुए हैं। कि कहीं हमें आग में न जलाया जाए, कहीं कड़ाहों में न फेंका जाए, कहीं हमें सताया न जाए। हम सब डरे हुए हैं। तो नरक का भय खड़ा हुआ है। स्वर्ग का प्रलोभन! हम सब प्रलोभित हैं।
एक जगह से मैं निकलता था। एक महिला ने लाकर मुझे एक कागज दिया। उसके ऊपर लिखा हुआ था कि क्या आप बहुत अच्छे बंगले में रहना चाहते हैं, जहां कि मंद-मंद हवाएं बहती हों ठंडी, पास में झरना हो, बड़े-बड़े छायादार दरख्त हों। मैं हैरान हुआ कि ऐसी चीज ऐसी जगह कहां पर है? कौन नहीं रहना चाहेगा? मैंने दूसरा पन्ना पलटा तो उसमें पीछे लिखा है तो फिर जीसस क्राइस्ट को स्वीकार कर लो। मैं बहुत हैरान हुआ तो जो जीसस क्राइस्ट को स्वीकार कर लेगा परमात्मा के लोभ में, वह किंगडम ऑफ गॉड में, उसको अच्छे-अच्छे मकान, झरनों

के किनारे, छायादार वृक्षों के नीचे मिलेंगे और जो नहीं विश्वास करेगा, नरक में उसका स्थान।
यह कोई जीसस क्राइस्ट के पीछे जो शैतान लगे हैं, उनकी ही करतूत है, ऐसा नहीं। राम के पीछे भी लगे हैं, कृष्ण के पीछे भी लगे हैं, मोहम्मद के, महावीर के, बुद्ध के, सबके पीछे शैतान लगे हुए हैं। और वे ईजाद कर रहे हैं आदमी की कमजोरी को, शोषण करने का किसका मन नहीं हो जाएगा, ठंडी हवाओं वाली दुनिया में रहने का? जहां कोई दुख न व्यापता हो, जहां कोई कष्ट न आता हो। और कितने सस्ते में? बहुत सस्ते में कि मंदिर में जाओ, थोड़े से पैसे चढ़ाओ, इतने सस्ते में! या एक ब्राह्मण को गाय दान कर दो, इतने सस्ते में? या एक मंत्र रोज पढ़ो, किसी किताब को रोज पढ़ो, इतने सस्ते में, कौन? कौन पागल होगा, कौन नासमझ होगा, जो यह मौका चूक जाएगा?
तो हमारा प्रलोभन है, उसका शोषण है। हमारा भय है, उसका शोषण है। हमारी मृत्यु है, उसका शोषण है। पुजारी बहुत कुछ जानते हैं, ह्युमन वीकनेसेस जानते हैं। और आदमी को अब तक इस बात का पता नहीं है कि उसकी कमजोरियों का कितना शोषण हुआ है और कितना शोषण हो रहा है।
दुनिया में सच्चे धर्म का जन्म तभी होगा जब हम मनुष्य को, उसकी कमजोरियों से मुक्त करने में लगेंगे, न कि उसकी कमजोरियों का शोषण चलने देंगे। मनुष्य को उसकी कमजोरियों से मुक्त करना है। मनुष्य को अभय, अलोभ, स्वतंत्रता, विचार, यह सब देने हैं, ताकि उसके भीतर एक गरिमा चिंतन की, चेतना की, एक गौरव जीवन का खड़ा हो सके, ताकि वह हर शोषण के विरोध में, उसके भीतर एक बगावत, एक विद्रोह, एक रिबेलियन खड़ा हो सके। ऐसे लोग एक धार्मिक दुनिया की शुरुआत बनेंगे। ये डरे हुए भयभीत लोग नहीं। ये घुटने टेक कर जमीन पर बैठे हुए, हाथ जोड़े आकाश की तरफ बच्चे मांगते हुए, बीमारियां ठीक करने की प्रार्थनाएं करते हुए लोग नहीं, ये स्वर्ग में स्थान पाने की कोशिश में लगे हुए लोग नहीं, ये नरक से बचने की कोशिश में लगे हुए लोग नहीं, ये मंदिर बना कर स्वर्ग में अपना कोई रिजर्वेशन कराने वाले लोग नहीं। इन लोगों से दुनिया धार्मिक नहीं होगी। इनसे उस ईश्वर का अवतरण जमीन पर नहीं हो सकता, जो कि सच्चा ईश्वर है। उसके लिए चाहिए समस्त कमजोरियों से मुक्त मनुष्य। और यह पुरोहितों ने और धर्मगुरुओं ने आजतक नहीं होने दिया है और वे कोशिश में लगे हैं कि आगे भी न होने दें।
निश्चित, उनकी कोशिश उनके व्यवसाय का प्राण है। उनके सारे प्रयास परमात्मा को बचाने के प्रयास नहीं, खुद को बचाने के प्रयास हैं। लेकिन यह तो आपको ज्ञात होगा ही कि हम जब भी कोई गलत काम करना चाहते हों तो अच्छे नारे ईजाद कर लेने चाहिए। जब हमें कोई बुरा काम करना हो तो कोई अच्छी फिलॉसफी की आड़ ले लेनी चाहिए। और जब हमें किसी की हत्या करनी हो तो हमें उसके ही हित में हत्या करने का प्रचार करना शुरू कर देना चाहिए। और अगर पुरोहित को अपना व्यवसाय बचाना है तो उसे परमात्मा को बचाने की घोषणा करनी चाहिए। उसे कहना चाहिए, परमात्मा खतरे में है। परमात्मा खतरे में है, अगर यह बात फैला दी जाए तो पुरोहित बच सकता है।
पुरोहित बचेगा तो धर्म नहीं बचेगा।
सामने विकल्प सीधा है। या तो जमीन पर आने वाले दिनों में धर्मगुरुओं
का यह पुराना व्यवसाय जारी रहेगा और परमात्मा के लिए स्थान नहीं बनाया जा सकेगा और या फिर यह व्यवसाय बंद होगा और हम एक ज्यादा मुक्त, ज्यादा स्वतंत्र चित्त से सत्य की खोज में संलग्न हो सकेंगे। इसलिए यह ठीक पूछा है कि क्या पुरोहित कुछ भी नहीं जानते हैं? पुरोहित बहुत कुछ जानते हैं। उनकी चालाकी, उनकी कनिंगनेस, उनकी होशियारी गहरी है। वे आदमी के आखिरी कोनों तक उसकी कमजोरियां जानते हैं और इसका उन्होंने फायदा उठाया है, यह फायदा चल रहा है।

पूछी हैं और बहुत सी बातें। पूछा है कि मैंने कहा कि शास्त्र को न मानें, शब्द को न मानें, तब तो फिर हम अकेले छूट जाएंगे फिर हम क्या मानेंगे?

अकेले छूटने से इतने भयभीत क्यों होते हैं। और न मानने की स्थिति इतना डर क्यों लाती है। क्या यह ख्याल में कभी नहीं आता कि न मानने को अगर एक क्षण के लिए भी चित्त ठहर जाए तो एक क्रांति हो जाएगी। न मानने की एक क्षण की स्थिति में भी क्रांति हो सकती है। न मानने का क्या मतलब? न मानना, नॉन-एक्सेप्टेंस का मतलब क्या है? उसका मतलब यह है कि मैं बाहर से आए हुए किसी भी ज्ञान को स्वीकार करने को राजी नहीं हूं। क्यों? इसलिए कि मैं उस ज्ञान का प्यासा हूं जो कि भीतर से आए, इसलिए मैं ठहरूंगा।
यह बाहर के ज्ञान का अनादर नहीं है। यह बाहर के ज्ञान का तिरस्कार नहीं है। यह गीता, कुरान का अनादर नहीं है। सिर्फ इतना निवेदन है खोजी का कि मैं उस ज्ञान को पाना चाहता हूं, जो प्राणों के प्राणों से उठता है। मैं उसको खोजना चाहता हूं, जो मेरे भीतर कहीं है। इसलिए ठहरो। जो बाहर का है, चाहे महावीर कहते हों, चाहें बुद्ध, चाहे कोई, अभी मैं कह रहा हूं कुछ बातें, कोई भी जो बाहर से कह रहा है, उससे कहो कि ठहर जाए। वह विचार बाहर रुक जाए। कहीं ऐसा न हो कि बाहर का विचार आए और मेरे सारे चित्त को घेर ले और मैं बाहर के विचार में इस भांति कैद हो जाऊं कि मुझे यह भूल ही जाए कि भीतर मेरे अज्ञान है। यह हुआ है। पांडित्य में ज्ञान का भ्रम पैदा हो जाना बिल्कुल रोज की घटना है। जब बहुत सी बातें हमें मालूम हो जाती हैं, बहुत सी इनफर्मेशन, बहुत सी सूचनाएं इकट्ठी हो जाती हैं तो हमें ख्याल पैदा हो जाता है कि हम जानते हैं।
और यह ख्याल, वह भीतर जो अज्ञान बैठा हुआ है, जहां हम कुछ भी नहीं जानते, कुछ भी नहीं, पता भी नहीं है कि कैसे जन्म हुआ है, पता भी नहीं है, कैसे मृत्यु आ जाएगी। पता भी नहीं है यह जो जीवन चल रहा है, क्या है? यह भी पता नहीं है यह श्वास क्यों चल रही है? कुछ भी पता नहीं है। इग्नोरेंस गहरी है। अज्ञान बहुत गहरा है। कुछ भी पता नहीं है। क्या पता है आपको? क्या पता है किसी को भी? एक-एक श्वास भी अपरिचित है, लेकिन फिर भी हम ज्ञान इकट्ठा कर लेते हैं और उस ज्ञान की छाया में और भ्रम में भूल जाते हैं इस गहरे अज्ञान को। यह खतरनाक स्थिति हो जाएगी, मौत उस सारे ज्ञान को छीन लेगी और रह जाएगा हाथ में केवल अज्ञान। इसलिए समझदार वे नहीं हैं जो ज्ञान को पकड़ कर ज्ञानी हो जाते हैं, समझदार वे हैं जो बाहर के ज्ञान को कहते हैं, ठहरो! अज्ञान मेरा है, यह ज्ञान तो पराया है। जिस दिन मेरा ही ज्ञान होगा, वही मेरे अज्ञान को तोड़ सकेगा।
स्मरण रखें, अज्ञान मेरा है। ज्ञान दूसरों का है। दूसरों का ज्ञान मेरे अज्ञान को कैसे तोड़ सकता है? मेरा ज्ञान ही मेरे अज्ञान को तोड़ सकता है। मेरा ज्ञान कैसे पैदा हो? उसकी पहली शर्त तो यह है कि मैं पराए और उधार ज्ञान को स्वीकार न करूं। स्वीकार कर लिया तब तो खोज ही बंद हो जाएगी। अगर मैं स्वीकार न करूं और अपने अज्ञान में ठहरा रह जाऊं! क्या होगा? पूछा है कि फिर तो हम अज्ञानी रह जाएंगे। नहीं।
अगर एक मकान में आग लगी हो और आप मकान के भीतर हो और आपको पता लग जाए कि बाहर आग लगी है और लपटें आपको दिखाई पड़ने लगें तो आप क्या पूछेंगे, फिर किसी से आप पूछेंगे कि अब मैं क्या करूं? क्या आप अलमारियां खोल कर कोई शास्त्र निकालेंगे और विचार करेंगे कि जब आग लगी हो चारों तरफ तो क्या करना चाहिए? या आप उस भवन में किसी गुरु की तलाश करेंगे, उसके चरणों में बैठेंगे, कहेंगे कि हे गुरुदेव! अब मुझे मार्ग सुझाइए कि जब आग लगी हो तो क्या करना चाहिए? नहीं, गुरुदेव भी उसी मकान के भीतर रहेंगे। वह शास्त्र वहीं जलते रहेंगे और आप, आग को देखते ही बाहर हो जाएंगे। फिर आप किसी से पूछने नहीं जाएंगे कि क्या करूं। आग का दिखाई पड़ना कि वह लगी है, आपके सारे प्राणों को इकट्ठा कर देता है। आपकी सारी जीवंत ऊर्जा संगठित हो जाती है। आप एक क्षण में पाते हैं कि न कोई शैथिल्य है, न कोई आलस्य है, न कोई निद्रा है। एक क्षण में आप पाते हैं कि कोई प्रमाद नहीं, कोई सुस्ती नहीं। एक क्षण में आप पाते हैं कि विचार सतेज है, चेतना जाग्रत है और आप पूछते नहीं किसी से मार्ग। लपटों में मार्ग खोजते हैं, बाहर निकल जाते हैं। बाहर निकल कर शायद आपको ख्याल आए कि गुरुदेव भीतर रह गए हैं, शास्त्र भीतर रह गए हैं,

जिनको हम ला नहीं पाए और जिनको हम देख भी नहीं पाए कि उनमें क्या लिखा था कि हम क्या करें?
आग लगी हो और उसका पूरा तथ्य दिखाई पड़ जाए तो उस तथ्य के दर्शन से जीवन में एक क्रांति घटित होती है। अज्ञान का पूरा दर्शन हो जाए तो वह आग लगे होने से भी ज्यादा भयानक, ज्यादा तीव्र, ज्यादा उत्कट पीड़ा और ताप उत्पन्न करता है। और यह ख्याल आ जाए कि मैं बिल्कुल अज्ञानी हूं तो उस अज्ञान के बाहर निकलने की, एक तीव्र ज्वलंत अभीप्सा, आकांक्षा, प्राणों के कण-कण में पैदा हो जाती है, वही आकांक्षा, अभीप्सा बाहर ले आती है। कोई गुरु बाहर नहीं लाता।
लेकिन अगर अज्ञान का बोध ही दब जाए। घर में आग लगी हो और कोई बैठ कर हमें समझा रहा हो कि कहां आग है, यह तो सब माया है। तुम तो राम-राम जपो और हम आंख बंद करके राम-राम जप रहे हों और मन में सोच रहे हों कि कहां आग लगी है! आग तो लगी ही नहीं है। यह हम बैठे वहां सोचते रहें तो जरूर फिर बाहर निकलना असंभव हो जाएगा। आग हमें लेकर ही समाप्त होगी। और यही हुआ है, जीवन में यही हो रहा है।
उधार ज्ञान हमें सुला देता है, जगाता नहीं है। उधार ज्ञान सुला देता है, जगाता नहीं, निद्रा लाता है, जागृति नहीं लाता।
खुद के अज्ञान का बोध, एक जागृति लाता है, एक होश लाता है, एक अवेयरनेस पैदा होती है और एक तीव्रता पैदा होती है और एक तीव्रता का बोध पैदा होता है कि मैं कैसे बाहर निकल जाऊं। सारे प्राण संलग्न हो जाते हैं और जिस व्यक्ति के भीतर भी सारे प्राण संलग्न हो जाएं किसी प्यास में, प्राप्ति निश्चित है। वह प्यास को पार कर जाएगा, अतिक्रमण कर जाएगा।
एक फकीर था, फरीद। एक नदी के किनारे एक झोपड़े में रहता था। एक आदमी एक सुबह-सुबह आया और उसने कहाः मुझे ईश्वर के दर्शन करने हैं। कई लोगों को यह फितूर पैदा हो जाता है ईश्वर के दर्शन करने का। कई लोगों को यह सनक चढ़ जाती है कि ईश्वर के दर्शन करने हैं। उस आदमी को भी चढ़ गई होगी। कई कारण हैं चढ़ जाने के। वह गया फरीद के पास और कहा कि मुझे ईश्वर के दर्शन करने हैं। फरीद ने कहा कि अभी तो मैं नदी पर स्नान करने जाता हूं, तुम भी आ जाओ। थोड़ा स्नान कर लें दोनो। फिर किनारे पर बैठ कर तुम्हें बताऊंगा और यह भी हो सकता है मौका मिल जाए तो नदी की धार में भी बता दूं। वह आदमी थोड़ा हैरान हुआ कि नदी की धार में क्या बताएगा? लेकिन फकीरों की बात है, हो सकता है कोई मतलब हो।
वह गया। दोनों स्नान करने उतरे और जैसे ही उस जिज्ञासु ने पानी में डुबकी लगाई, फरीद ने उसकी गर्दन पानी के नीचे दबाई। उसके सिर को न उठने दे। फरीद तगड़ा आदमी था। जिज्ञासु मुश्किल में पड़ गया। सारे प्राणपण से चेष्टा करने लगा, लेकिन फरीद दबाए चला जाता था, दबाए चला जाता था। लेकिन थोड़ी देर में फरीद ने पाया कि उसकी ताकत, खुद की ताकत, दबाने की ताकत कम पड़ रही है और वह उठने वाला आदमी पूरी ताकत से ऊपर उठ रहा है।
फरीद मजबूत था, वह जिज्ञासु दुबला-पतला और कमजोर आदमी था, लेकिन फरीद
को उठा कर वह आदमी ऊपर निकल आया। फरीद ने उससे पूछा कि मेरे मित्र, कुछ समझे?
तो उस आदमी ने कहा कि क्या खाक समझता, आप मेरी जान लिए लेते थे, मेरे प्राण लिए लेते थे। समझने की इसमें कहां बात थी। और मैं किस पागल के पास आ गया। शक तो मुझे तभी हुआ था, जब आपने कहा कि मौका लगा तो नदी की धार में ही बता देंगे। शक तो मुझे तभी हुआ था कि मैं गलत जगह आ गया, लेकिन एकदम जा भी नहीं सकता था, तो आपके साथ चला आया। आप तो प्राण लिए लेते थे। परमात्मा के दर्शन तो रहे दूर, अपने ही प्राण समाप्त हुए जाते थे। कौन दर्शन करता फिर? फरीद ने कहाः एक बात मुझे पूछनी है। जब मैंने तुम्हें भीतर दबाया था
तो कितने-कितने विचार तुम्हारे मन में थे? उसने कहाः क्या मजाक करते हैं? कोई विचार नहीं था, एक ही ख्याल था कि किसी तरह एक श्वास, हवा मिल जाए। फरीद ने पूछाः कितनी देर तक वह ख्याल रहा?
उसने कहाः वह भी थोड़ी दूर तक रहा। और जब सारे प्राण संकट में पड़ गए तो
वह ख्याल भी मिट गया। फिर ख्याल कोई भी न रहा। बस, एक अनजानी-अबूझ प्रेरणा

थी, जो ऊपर उठा रही थी। कोई ख्याल नहीं था, कोई विचार नहीं था। कुछ ऊपर उठ रहा था, भीतर से। सारे प्राण संलग्न थे। एक-एक कण संलग्न था। इसका कोई ख्याल नहीं था। यह हो रहा था। इसका कोई ख्याल नहीं था। इसका कोई विचार नहीं था, इसका कोई आइडिया नहीं था कि यह मैं करूं। या यह मैं कर रहा हूं, ऐसा कुछ भी नहीं था। यह हो रहा था। कोई प्राणों में जग गया था और ऊपर उठ रहा था। और तब मेरी सारी शक्ति इकट्ठी हो गई थी और तब जैसे ही मेरी सारी शक्ति इकट्ठी हुई, मैंने पाया कि आप बहुत कमजोर हैं। आपके हाथ ढीले पड़ने लगे, मैं ऊपर आ गया।
फरीद ने कहा कि जिस दिन ईश्वर की खोज में इतने ही गहरे अज्ञान में डूबोगे, इतने ही गहरे जिस दिन प्यास में डूबोगे, उस दिन कोई ताकत, कोई ताकत तुम्हें रोक ना पाएगी। तुम पाओगे कि तुम अतिक्रमण कर गए। तुम पार कर गए वह सीमा, जहां तुम मिट जाते हो और परमात्मा शुरू हो जाता है।
शास्त्रों और शब्दों से नहीं मिलता ज्ञान! ज्ञान मिलता है प्राणों की समग्रीभूत प्यास से, इंटिग्रेटेड थर्स्ट, जब सारे प्राण इकट्ठे हो जाते हैं किसी प्यास में, तो ज्ञान उपलब्ध होता है। ज्ञान शास्त्रों से सीखा गया उपक्रम नहीं है, बल्कि प्राणों की प्यास में और अभीप्सा में पाई गई अनुभूति है। ज्ञान इसीलिए बाहर से उपलब्ध नहीं होता, क्योंकि प्यास भीतर है और भीतर की कोई प्यास बाहर के किसी पानी से न बुझ सकेगी। और बाहर के पानी से जो बुझ जाती हो, जान लेना कि वह प्यास भी बाहर की रही होगी। वह जो प्राणों की प्यास है, उस प्यास के ही इकट्ठे हो जाने में उसकी तृप्ति छिपी है। प्यास ही प्राप्ति है।
लेकिन हम बाहर ज्ञान खोजते हैं और उसको पकड़ लेते हैं और जब पकड़ लेते हैं तो द्वार बंद हो जाते हैं, खोज बंद हो जाती है, प्यास शिथिल हो जाती है, प्राण इकट्ठे नहीं हो पाते और इस शिथिलता में, इस दुर्बलता में, इस खंड-खंड बंटे होने में हम भटकते हैं। स्मरण करते हैं, शब्द दोहराते हैं, जीते हैं और मरते हैं, कुछ हल नहीं हो पाता।
बंगाल में ऐसा हुआ। एक युवक अपने पिता के पास बैठा था। उसके पिता की उम्र साठ को पार कर गई थी। उसके पिता ने उस युवक को कहा कि हो सकता है कि कुछ ही दिन का मेहमान मैं और होऊं। लेकिन मैंने तुम्हें न तो कभी मंदिर जाते देखा, न कभी धर्म की पुस्तक पढ़ते देखा, न कभी मैंने सत्संग करते देखा। तो मैं तुम्हें यह अंत में कहूं कि कुछ उस तरफ भी ध्यान दो।
उस युवक ने कहाः कुछ ध्यान! कैसी बातें करते हैं आप? परमात्मा भी कुछ ध्यान से पाया जा सकता है? कुछ ध्यान से? उसने कहा कि मैं तो जहां तक सोच पाया हूं वह यही कि कुछ ध्यान तो आपको देते हुए मैं रोज देखता हूं। रोज सुबह आप मंदिर जाते हैं! कुछ ध्यान मंदिर में देते हैं। शेष ध्यान दुनिया में देते हैं। और मुझे शक यह है कि जो तेईस घंटे दुनिया में रहता हो, वह एक घंटे मंदिर में कैसे रह सकता है?
और जो मंदिर की सीढ़ियों तक फिल्मी गाने गुनगुनाता हो, वह मंदिर के भीतर भजन कैसे गा सकता है? हो सकता है कि मंदिर के भीतर भजन ही गाता हो, लेकिन उनका मूल्य फिल्मी गाने से ज्यादा नहीं हो सकता, क्योंकि गुनगुनाने वाला वही है जो सीढ़ियों के बाहर था, वही सीढ़ियों के भीतर भी है। और सवाल गुनगुनाने वाले का है। सवाल यह नहीं है कि वह क्या गुनगुनाता है। आप क्या पढ़ते हैं यह सवाल नहीं है, आप क्या हैं यह सवाल है। आप चाहे वेद-शास्त्र पढ़िए, चाहे कोकशास्त्र पढ़िए, या चाहे कुछ और पढ़िए। आप आप हैं और आपके उपर निर्भर है सारी बात। किताब वैसी हो जाएगी जैसे आप हैं। जिस मंदिर में आप प्रवेश करेंगे वह मंदिर आप जैसा हो जाएगा। और जिस भगवान का आप हाथ पकड़ लेंगे पाएंगे कि भगवान आप जैसा हो गया, क्योंकि आप असली बात हैं।
तो उसने अपने पिता से कहा कि मैं देखता हूं इधर आपको। तीस वर्षों से मैं भी देखता हूं, लेकिन न तो आपकी प्रार्थनाओं में कोई अर्थ निकला और न आपकी पूजा में और न आपके कोई ध्यान में। उस लड़के ने कहा कि कभी मैं भी स्मरण करूंगा, लेकिन एक ही बार स्मरण करूंगा, क्योंकि दो बार स्मरण करने का क्या फायदा? अगर एक बार स्मरण से नहीं हो सका तो दूसरी बार स्मरण से क्या होगा? क्योंकि स्मरण करने वाला तो मैं ही रहूंगा और तीसरी बार करने

से क्या होगा? हजार बार करने से क्या होगा? एक बार करूंगा। एक बार मंदिर जाऊंगा। एक बार परमात्मा के द्वार पर खड़ा होना है, लेकिन प्रतीक्षा में हूं उस दिन की, जिस दिन कि मैं पूरा का पूरा खड़ा हो सकूं। जब तक अधूरा खड़ा होऊंगा, तब तक कुछ होने वाला नहीं है।
क्योंकि बड़े रहस्य और आनंद की बात यह है कि आपका पूरी तरह इकट्ठा हो जाना ही, आपके भीतर परमात्मा की उपलब्धि है। और तो कोई, कोई परमात्मा नहीं है बाहर। आपका पूरी तरह इकट्ठा हो जाना, आपका एक जुट हो जाना, आपके सारे प्राणों का समग्र हो जाना, खंड-खंड नहीं! डिसइंटिग्रेटेड नहीं, टूटा हुआ नहीं, इकट्ठा हो जाना। वही तो आपका जान लेना है और यह हुआ।
पिता कोई अस्सी वर्ष के हुए तब वे जीवित थे और उनका लड़का मंदिर तब तक नहीं गया था। साठ वर्ष का उनका लड़का भी हो गया था और एक दिन उन लोगों ने देखा कि वह सुबह-सुबह मंदिर की तरफ जा रहा है। सारे लोग हैरान हुए। वह जिंदगी भर का नास्तिक था। कभी मंदिर नहीं गया और मंदिर जा रहा है। लेकिन वह मंदिर गया फिर वापस नहीं लौटा मंदिर से। और मंदिर में वह हाथ जोड़कर खड़ा हुआ और सब समाप्त हो गया। सांस जो बाहर थी, बाहर रह गई, जो भीतर थी, भीतर रह गई। उसके प्राण उड़ गए। उसके पास उसके खीसे में एक पत्र लिखा हुआ मिला। और उसने लिखा--आज मैं उस अवस्था में हूं कि मेरी प्यास पूरी-पूरी जग गई है और मैं अपने अज्ञान से समग्ररूपेण दुखी हो गया हूं। और आज, जब कि आग मेरे चारों तरफ लगी है, शायद मैं बाहर निकल सकूं।
क्या किया उसने उस मंदिर में जाकर, खड़े होकर? और क्या उस करने का संबंध
उस मंदिर से है? क्योंकि मंदिर में तो वहां रोज लोग खड़े होते थे जाकर। नहीं, उस मंदिर से, उस करने का कोई संबंध नहीं है। वह आदमी कहीं भी खड़े होकर वही करता तो यह हो जाता, जो उस मंदिर में हुआ। उस बात के करने का संबंध उसके अपने भीतर से है। उसके प्राण किसी किनारे आकर इकट्ठे हो सके हैं किसी प्यास में। उस प्यास में कोई बात घटित हो सकती है। कोई क्रांति, कोई विस्फोट, कोई एक्सप्लोजन हो सकता है।
धर्म एक एक्सप्लोजन है एक विस्फोट है। और केवल उन्हीं के भीतर होता है, जो अपने अज्ञान की पूरी-पूरी पीड़ा को जीते हैं और झूठे ज्ञान में उसको छिपाते नहीं हैं।
तो इसलिए मैंने कहा कि न ही किताब में, न ही शास्त्र, वेद और कुरान और बाइबिल, न ही महावीर और न ही बुद्ध के वचन। किसी के भी वचन नहीं ले जा सकेंगे वहां, जहां परमात्मा है। वहां तो ले जाएगी वह प्यास, जहां आप हैं। तो यह शब्द और शास्त्र इस प्यास को शिथिल न कर दें, इस प्यास को ढांक न दें, इस चिंगारी के ऊपर राख न बन जाएं। बन गए हैं राख। इसलिए ज्ञानी मुश्किल से ही, यह तथाकथित ज्ञानी मुश्किल से ही सत्य को कभी जान पाते हैं। अब तक सुना तो नहीं कि किसी पंडित ने सत्य जाना हो। अब तक ऐसा सुना नहीं, अब तक ऐसा हुआ नहीं, होगा भी नहीं।
यह जो मैंने कहा... तो पूछा है, क्या यह सब व्यर्थ है? क्या इन सबको फेंक दें?
अगर इनको फेंकने गए तो उसका मतलब होगा कि इनमें कुछ न कुछ अर्थ है, तभी
तो फेंकने गए। अगर इनमें आग लगाने गए तो उसका मतलब यह हुआ कि इनसे भयभीत हैं, इसलिए आग लगाने गए। नहीं, दोनों स्थितियों में हम बाहर की चीज को बहुत मूल्य दे देते हैं। या तो हम कहते हैं हम पूजा करेंगे और या हम कहते हैं हम आग लगा देंगे। लेकिन दोनों हालत में हम पूजा करें तो आग लगाएं तो बाहर से ही बंधे रहते हैं।
नहीं, मैं यह नहीं कह रहा हूं कि पूजा मत करिए, आग लगा दीजिए, क्योंकि
आग लगाने वाला भी उस शास्त्र को मानने वाला है, तभी तो इतनी मेहनत कर रहा है कि आग लगाने जा रहा है। नहीं, आग लगाने का सवाल नहीं है और न पूजा करने का सवाल है। सवाल इस सीधे से सत्य को जानने का है कि क्या जो भी मैं बाहर से सीख लेता हूं, वह मेरा ज्ञान बन सकता है। नहीं, वह केवल मेरी स्मृति बनता है, मेमोरी बनता है, ज्ञान नहीं, नालेज नहीं। स्मृति कितनी ही ज्यादा संगृहीत हो जाए, वे उत्तर झूठे हैं। किसी ने कहा है कि अगर बचपन से हमें

गीता और वेद और उपनिषद की कथाएं ना बताई गई होतीं और हमारी मां ने और हमारे पिता ने हमें शिक्षा न दी होती तो हम आपकी बात सुनने ही नहीं आते।
यह हो सकता था कि मेरी बात सुनने आप न आते। आने की कोई बड़ी जरूरत भी नहीं थी। लेकिन इन बातों को सीख कर अगर आप मेरी बात सुनने आए हैं तो एक बात स्मरण रखना, सुनने के भ्रम में होंगे, सुन न पाएंगे, क्योंकि ये बातें बीच में आ जाएंगी और सुनने न देंगी और यह भी ख्याल में मत रखना।

यह पूछा है प्रश्न में कि अगर हमने यह गीता और यह सब बातें नहीं पढ़ी होतीं तो हमारे मन में ईश्वर का ख्याल ही कैसे पैदा होता?

कैसा पागलपन है? अगर सारी किताबें नष्ट हो जाएं तो आप सोचते हैं कि ईश्वर नष्ट हो जाएगा? अगर सारी दुनिया की किताबें जला कर खाक कर दी जाएं तो क्या आप सोचते हैं कि फिर दुनिया में वे लोग पैदा नहीं होंगे जो ईश्वर की खोज करेंगे? तो ईश्वर फिर बड़ा कमजोर है जोकिताबों पर निर्भर है। ईश्वर बड़ा कमजोर है। और तब तो यह ईश्वर बहुत बढ़ जाना चाहिए, क्योंकि प्रेस की ताकत बहुत बढ़ गई है। छापेखाने बहुत हैं और कोई पांच हजार किताबें हर सप्ताह छपती हैं तब तो दुनिया में थोड़े दिन में ईश्वर खूब बढ़ जाएगा। लेकिन क्या आपको पता है कि जितनी किताबें बढ़ती हैं, उतना ही ईश्वर कम होता चला जाता है? उलटा संबंध है दोनों के बीच कुछ। असल में कोई ईश्वर की खोज की प्रेरणा किताबों से नहीं आती है। ईश्वर की खोज की प्रेरणा तो जीवन के दुख से आती है, जीवन की पीड़ा से आती है, अशांति से आती है। जब तक हृदय में दुख है, पीड़ा है और अशांति है, तब तक ईश्वर की खोज पैदा होती रहेगी। चाहे शास्त्र रहें और चाहे जाएं। बल्कि शास्त्रों के कारण सस्ते संतोष मिल जाते हैं। अगर शास्त्र न हों तो सस्ते संतोष मिलने असंभव हो जाएंगे। तब तो आदमी को अपनी ही खोज करनी पड़ेगी और अपने ही श्रम से कुछ पाना पड़ेगा और उसी से संतोष मिल सकेगा। तो मेरा निवेदन है, आग लगाने को नहीं कहता हूं, क्योंकि आप जो पूजा करते थे, अगर आप ने आग भी लगाई तो वह आपकी पूजा से भिन्न नहीं होगी। शास्त्र के साथ कुछ करने को नहीं कह रहा हूं। मेरी बात को गलत नहीं समझ लेना। आपके साथ कुछ करने को कह रहा हूं। सवाल गीता के साथ नहीं है, आपके साथ है। कुरान और बाइबिल के साथ नहीं है, आपके साथ है। आपका चित्त ऐसा होना चाहिए, जो शब्द से और शास्त्र से मुक्त हो, जो शब्द और शास्त्र से बंधा हुआ न हो, जो स्वतंत्र हो, क्योंकि स्वतंत्रता ही सत्य की खोज की पहली शर्त है।

एक-दो छोटे-छोटे गैर-गंभीर प्रश्न हैं, उनकी भी मैं बात कर लूं, फिर कुछ जो प्रश्न रह जाएंगे उनकी मैं परसों बात करूंगा।
किसी ने मुझसे पूछाः कल मैंने कहा कि एक बंदर ने मुझे कहा है कि आदमी
का पतन बंदरों से हुआ है, यह विकास नहीं है, तो उस व्यक्ति ने मुझसे पूछा है कि क्या बंदर भी बोलते हैं?

मैं यह निवेदन करना चाहूंगा कि बंदरों का बोलना तो बिल्कुल स्वाभाविक है, न बोलना बहुत कठिन है। बंदर चुप रह ही नहीं सकते और जो चुप रह जाए, ऐसा बंदर अगर मिल जाए तो शक होगा कि कहीं यह आदमी तो नहीं है। चुप रह जाए! मौन, साइलेंस, असंभव। बंदर तो खूब बोलते हैं। यह दूसरी बात है कि आपको उनकी भाषा समझ में न आती हो, लेकिन जिन बंदरों की भाषा आपको समझ में आती हो, उनको देख कर आप, उनकी बाबत भी समझ सकते हैं, जिनकी समझ में न आती हो। मुझे किसी ने एक घटना बताई थी, वह ख्याल आ गई।
एक गधा आदमियों की संगत में रहते-रहते बोलना सीख गया था। आदमी की संगत किसको नहीं बिगाड़ देती है। वह गधा भी बिगड़ गया। वह बोलना सीख गया। और जब वह बोलना सीख गया तो उसने पहला काम यह किया कि बाकी गधों को इकट्ठा किया और उनका नेता हो गया। जो भी बोलना सीख सकता है, वह नेता हो ही जाएगा। वह चाहे फिर गधा हो, इससे क्या फर्क पड़ता है? वह गधा बोलना सीखा और बोलना सीखने के बाद जो दूसरी सीढ़ी थी, वह नेता हो गया। और स्वभावतः इसके बाद तीसरी सीढ़ी थी

कि उसने दिल्ली की यात्रा की। जो भी बोलना जानता है और नेता हो सकता है, वह फिर दिल्ली जाएगा ही और रहेगा कहां, जमीन पर फिर और कोई रहने लायक ठीक स्थान है नहीं! दिल्ली पहुंच कर कोई क्या करेगा!
उसने पहला काम--पुरानी बात है, वह पंडित नेहरू से मिलने चला गया। दरवाजे पर संतरी खड़ा था, लेकिन जैसे सभी संतरी सोए रहते हैं, वह संतरी भी सोया हुआ था। जैसा कि सभी पहरेदारों का काम है कि वह सोए रहते हैं। ऐसा वह भी सोया हुआ था और फिर कोई आदमी भी जाता तो संतरी थोड़ा सचेष्ट होता। आदमी से डर होता है, एक गधा जा रहा था, उसने कोई फिकर नहीं की। वह गधा बिना किसी प्रवेश-पत्र के भीतर चला गया।
सुबह-सुबह का वक्त था और नेहरू अपनी बगिया में घूमते थे। वह गधा पीछे गया उनके और नेहरू तो बड़ी तेज चाल से घूम रहे थे, चाल क्या थी, दौड़ना ही था करीब-करीब, वह गधा भी किसी तरह हांफता हुआ पीछे गया और उसने कहाः पंडित जी! नेहरू बहुत घबड़ाए, क्योंकि वे भूत-प्रेत में विश्वास नहीं करते थे। वहां कोई आदमी दिखाई नहीं पड़ता था जो बोलता हो। उन्होंने चारों तरफ गौर से देखा। वहां कोई दिखा ही नहीं! सिर्फ एक गधा खड़ा हुआ है। तो उन्होंने बहुत जोर से कहा कि कौन है? मेरे सामने आए? मैं कोई भूत-प्रेत में विश्वास नहीं करने वाला हूं! जो भी हो, सामने आओ। उस गधे ने कहाः माफ करिए, मैं तो सामने खड़ा हूं। सिर्फ एक ही मेरी भूल है कि मैं जरा बोलता हूं। आप नाराज तो नहीं होंगे?
नेहरू ने कहाः तू बिल्कुल बेफिकर रह। मैं बोलते हुए गधों से इतना ज्यादा रोज-रोज परिचित होता हूं रोज-रोज कि तू बिल्कुल फिकर मत कर। तू बोल। गधे ने कहाः मैं तो डरता था कि पता नहीं आप मुझसे मिलना पसंद करेंगे या नहीं! नेहरू ने कहाःयहां गधों के सिवाय मिलने और आता ही कौन है?
फिर पता नहीं, उन दोनों में क्या बातें हुई। वह तो मुझे कुछ पता नहीं। बातें जरूर कोई कुछ गुफ्तगू हुई होगी, क्योंकि किसी अखबार ने अब तक छापी नहीं। कोई सीक्रेसी, कोई कांफिडेंशियल कोई बात होगी। किसी अखबार में छपी नहीं अब तक।
लेकिन आदमी इस भ्रम में न रहे कि वही बोलना जानता है। इस भ्रम में न रहें, बोलते तो सभी हैं। आदमी ही अकेला समर्थ है जो कि न बोलने की स्थिति को उपलब्ध हो सकता है। अकेला आदमी समर्थ है कि न बोलने की स्थिति को। नॉनस्पीकिंग, नॉनथिंकिंग की स्थिति को उपलब्ध हो सकता है। उसी अबोल, उसी शांत स्थिति से वह द्वार खुलता है जो परमात्मा का है। वह तो मैंने बंदर की बात मजाक में कही थी और अगर आप मजाक भी नहीं समझ पाए तो धर्म क्या समझ पाएंगे? बड़ी मुश्किल हो जाएगी। और लोग इतने गंभीर हो गए हैं दुनिया में कि मजाक भी नहीं समझ पाते, परमात्मा को क्या समझ पाएंगे? बहुत कठिन है।
यह जो थोड़ी सी बातें मैंने अभी आपको कही हैं वे इस ख्याल से नहीं, कल
और परसों भी जो बातें कहूंगा, वे इस ख्याल से नहीं कि मैं आपको कोई ज्ञान दे रहा हूं। इस भ्रम में बिल्कुल नहीं रहना और यह ख्याल हो तो आना ही मत कि मुझसे कोई ज्ञान मिल सकता है। नहीं, मेरी सारी कोशिश इस बात के लिए नहीं है कि आपको कुछ ज्ञान दूं, बल्कि इस बात के लिए है कि जो ज्ञान का आपको भ्रम है उसको तोड़ूं। परमात्मा करे आपका झूठा ज्ञान टूट जाए और उस अज्ञान को आप जान सकें, उस ओरिजिनल इग्नोरेंस को, जो कि है। उस मौलिक अज्ञान को, जो कि है भीतर तो शायद उस अज्ञान में वह पीड़ा, वह ताप, वह घबड़ाहट पैदा हो, वह संताप, वह एंग्विश पैदा हो। वे प्राण इतने, इतने तड़फड़ा जाएं कि उस तड़फड़ाहट से आपके जीवन में क्रांति हो जाए। उसी अज्ञान के लिए इन चार दिन कोशिश करूंगा।
मैं तो अज्ञान सिखाता हूं। इसलिए मेरी बातें अगर ठीक न लगती हों तो कोई हैरान होने की बात नहीं है, क्योंकि अज्ञान सिखाने वाला ठीक नहीं लग सकता है। ज्ञान सिखाने वाला ठीक लग सकता है, क्योंकि उससे आप कुछ सीख कर लौटते हैं। अज्ञान सिखाने वाला तो आपसे कुछ और छीन लेता है। आप घर जाते हैं तो और कुछ खोकर जाते हैं। परमात्मा करे किसी दिन आप घर ऐसे जाएं कि आप सब खोकर चले जाएं तो शायद उसी दिन घर पहुंचने पर आपको जो मिले, वह परमात्मा हो।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं।
सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

क्या ईश्वर मर गया है?
तीसरा प्रवचन

ज्ञान की पहली किरण

एक छोटी सी कहानी से आज की चर्चा प्रारंभ करना चाहूंगा।
एक रात एक सराय में मैं मेहमान हुआ। सराय बहुत बुरी तरह से भरी हुई थी। उसमें बहुत मेहमान थे और आधी रात गए एक नया मेहमान भी उस सराय में आ गया, जिसके लिए कोई भी जगह नहीं थी। हमेशा ही सरायों में ऐसे मेहमान आ जाते हैं जिनके लिए कोई जगह नहीं होती, लेकिन फिर जगह बनानी पड़ती है। मैं जिस कमरे में था, उस कमरे में ही उस नये मेहमान को भी लाकर ठहरा दिया गया। छोटा कमरा था, मेहमान उसमें ज्यादा हो गए। लेकिन देख कर मैं हैरान हुआ। आधी रात हो गई थी, वह थका हुआ मेहमान, अपनी पगड़ी भी उसने अलग नहीं की, अपने जूते भी नहीं खोले और बिस्तर पर लेट गया, और फिर वह करवटें बदलने लगा। उसे कोई नींद आने की संभावना मुझे न दिखाई पड़ी, तो मैंने उससे पूछा कि मित्र, क्या उचित नहीं होगा कि तुम अपने कपड़े उतार दो, पगड़ी और जूते अलग कर दो, ताकि आराम से सो सको?
वह आदमी बोलाः सोचता तो मैं भी यही हूं कि कपड़े अलग कर दूं, लेकिन एक खतरा है। खतरा यह है कि मैं स्वभाव से बहुत भुलक्कड़ हूं। कपड़ों के कारण मुझे याद रहता है कि मैं मैं ही हूं। कपड़े मैंने अलग कर दिए तो सुबह कैसे तय करूंगा कि मैं कौन हूं और आप कौन हैं?
मुश्किल उसकी बिल्कुल ही सच्ची थी। अगर हम सबके कपड़े अलग कर दिए जाएं
तो कौन किसको पहचान सकेगा? हम सभी लोग तो एक-दूसरे को कपड़ों से पहचानते हैं। और इसीलिए तो कपड़े और कपड़े इकट्ठे करते जाने की इतनी दौड़ है।
मैंने कहाः बात तो तुम बिल्कुल ही ठीक कहते हो। और मुझे एक घटना याद आ गई। एक बहुत बड़े महाकवि को एक बादशाह ने अपने घर भोजन पर निमंत्रित किया। वह गरीब था कवि। उसके मित्रों ने कहाः इन कपड़ों को पहन कर मत जाओ, क्योंकि बादशाह से मिलना मुश्किल है। दरवाजे के द्वारपाल ही तुम्हें वापस लौटा देंगे। ये कपड़े इस योग्य नहीं कि कोई तुम्हें पहचाने। लेकिन कवि अपनी कविताओं में भूला था, वह गया और जो होना था हुआ। द्वारपालों ने उसे वापस लौटा दिया। उसने बहुत कहा कि मैं कौन हूं, मुझे भीतर जाने दो। लेकिन उन्होंने कहाः छोड़ो भी। ऐसे पागल रोज यहां आकर परेशान किया करते हैं। भाग जाओ।
वह लौट आया। उसके मित्रों ने कहाः हमने पहले कहा था। दूसरे दिन उधार कपड़े पहन कर वह गया। द्वारपाल, जिन्होंने कल उसे हटा दिया था, उसके पैर छुए और कहा कि महाराज भीतर आएं, आप कहां से पधारे हैं? बादशाह ने उसे अपने भोजन-गृह में ले जाकर पूछा कि कल मैं प्रतीक्षा करता रहा, आए नहीं? वह कुछ बोला नहीं, मुस्कराता रहा।
भोजन की थाली लगा दी गई। उसने भोजन उठाया और पहले अपने कपड़ों को कहा
कि मेरे कोट इसे खा लो, मेरी पगड़ी इसे खा लो। वह राजा बोलाः आपका मस्तिष्क तो ठीक है? कविता करते-करते पागल तो नहीं हो गए, जैसा कि अक्सर हो जाता है-- कविता करते-करते लोग पागल हो जाते हैं। या पागल कविता करने लगते हैं। वही तो नहीं हो गया? उसने कहा कि नहीं, मैं तो कल भी आया था, लेकिन ये कपड़े मेरे साथ नहीं थे। मैं बाहर से ही वापस लौटा दिया गया था। जिन कपड़ों के कारण मैं भीतर आया हूं, उन्हें सम्मान पहले न दूं यह अशिष्टता होगी।
तो मैंने उस मेहमान को यह कहाः बात तो तुम ठीक कहते हो। दुनिया में सभी कपड़ों से पहचाने जाते हैं, दुनिया में तरह-तरह के कपड़े हैं। उन्हीं से तो हम एक-दूसरे को पहचानते हैं। और यह भी तुम ठीक कहते हो कि दूसरे हमें कपड़े से पहचानते हैं। हम खुद भी तो अपने को अपने ही कपड़ों से पहचानते हैं। अगर हम बिल्कुल नग्न खड़े हो जाएं तो खुद को भी पहचानना मुश्किल हो जाएगा कि मैं कौन हूं, क्योंकि हम अपने को भी दूसरों की मार्फत पहचानते हैं। कोई सीधा अपने को कभी पहचानता है? हम उसी भांति हमें पहचानते हैं जिस तरह दूसरे लोग अपने को पहचानते हैं। दूसरे लोगों की नजर से ही तो हम अपने को देखते हैं। सीधी अपनी नजर से कौन अपने को देखता है? और इसलिए अगर कपड़े न

होंगे और दूसरे हमें न पहचान पाएंगे, तो यह भी तुम ठीक कहते हो कि तुम अपने को न पहचान पाओगे।
तो उसने कहाः इसी मुसीबत में मुझे नींद नहीं आ रही है। कमरा अकेला होता तो मैं कपड़े अलग करके सो जाता। लेकिन अभी कपड़े अलग कर दूंगा तो सुबह कैसे तय होगा कि मैं कौन हूं और आप कौन हैं? मैंने कहा कि मित्र, एक तरकीब है। हमसे पहले उस कमरे में जो ठहरे थे, उनमें से कोई छोटा बच्चा अपना एक गुब्बारा खेलते हुए छोड़ गया था, एक छोटी गुड़िया छोड़ गया था। तो मैंने उससे कहाः ऐसा करो, इस गुब्बारे को मैं तुम्हारे पैर में बांधे देता हूं और इस गुड़िया को तुम्हारे पास रखे देता हूं, ताकि पहचान रहे, आइडेंटिटी रहे कि तुम तुम्हीं हो। तो सुबह उठ कर तुम अपने कपड़े पहन लेना। मैंने पूछाः तुम्हारा नाम क्या है? उसने कहाः मेरा नाम? मेरा नाम मुल्ला नसरुद्दीन है। उसने कपड़े उतार दिए। मैंने उसके पैर में वह गुब्बारा बांध दिया और उसके पास गुड़िया रख दी। वह निश्चिंत होकर सो गया।
और जब उसकी घरघराहट की आवाज आने लगी तो मेरे मन में एक ख्याल उठा। और मैं उठा और मैंने उसका गुब्बारा निकाल कर अपने पैर में बांध लिया और उसकी गुड़िया उठा कर अपने बिस्तर पर रख ली। और जैसा होना था, वही हुआ। कोई चार बजे वह चिल्लाया और उसने कहाः देखिए, जो गड़बड़ होनी थी वह मालूम होता है हो गई। वह उठा उसने मुझे हिलाया और कहा कि मुसीबत खड़ी हो गई है, उठिए। मैंने कहाः क्या हुआ? उसने कहाः मुसीबत यह हो गई कि गुब्बारा आपके पैर में बंधा है, गुड़िया आपके बिस्तर पर है। तो अगर आप मुल्ला नसरुद्दीन हैं तो मैं कौन हूं?
जैसा आप हंसे, मैं भी हंसा। लेकिन उस हंसी के लिए आज तक रोना पड़ रहा है, क्योंकि मैं हंसा तो वह दरवाजा खोल कर बाहर निकल गया और चिल्लाने लगाः मैं कौन हूं? और मेरी कुछ समझ में आना मुश्किल हो गया। मैं उसके पीछे-पीछे गया, लेकिन थोड़ी देर हो गई, क्योंकि मैं भी बिस्तर में था और उठ कर मैंने कपड़े पहने और जब तक कपड़े पहने तब तक वह आदमी दूर निकल गया। बाहर मैं आया तो एक झाड़ के नीचे से आवाज आ रही थी। कोई पूछ रहा थाः मैं कौन हूं? तो मैं वहां गया और जो आदमी पूछ रहा था कि मैं कौन हूं, उससे मैंने पूछा, क्या तुम मुल्ला नसरुद्दीन हो? उसने कहाः मुझे यही पता नहीं कि मैं कौन हूं। तो मैं कैसे बताऊं कि मैं मुल्ला नसरुद्दीन हूं? और तब जहां भी कोई पूछता है तो मैं उससे पूछता हूं, क्या तुम मुल्ला नसरुद्दीन हो? लेकिन वह कहता है, मुझे पता नहीं कि मैं कौन हूं?
तो वह मुल्ला नसरुद्दीन के कपड़े मैं अपने साथ लिए घूम रहा हूं। वह कहीं मिल जाए तो उसके कपड़े दे दूं और छुटकारा हो। वह आदमी का कोई पता नहीं चल रहा है। और जिस आदमी को भी गौर से देखता हूं तो वही आदमी यह पूछता हुआ मालूम पड़ता है कि मैं कौन हूं। किसी को भी यह पता नहीं है।
यह उस आदमी पर हम हंसे, मैं भी हंसा था। लेकिन फिर पता चला कि वह आदमी
तो सभी मनुष्यों का प्रतिनिधि था, क्योंकि किसी भी आदमी को तो पता नहीं है कि वह कौन है। इस बात से फर्क नहीं पड़ता है कि आपको पता है कि आपका नाम क्या है और आपका घर कहां है। ये सब वस्त्रों की बाबत बात है। यह बातचीत कपड़ों की है। आपका नाम बदला जा सकता है और आप न बदलेंगे। और आपके कपड़े बदले जा सकते हैं और मकान भी बदला जा सकता है और आप न बदलेंगे। आपका पद छीना जा सकता है, आपकी धन-दौलत छीनी जा सकती है और आप सड़क के भिखारी हो सकते हैं, फिर भी आप न बदलेंगे। आप बच्चे थे जवान हो गए, बूढ़े हो गए, सब बदल गया, फिर भी आप नहीं बदले।
वह कौन है जो भीतर बिना बदला हुआ मौजूद है, उसकी कोई पहचान है? उसका कोई स्मरण, उसकी कोई रिमेम्बरिंग है? नहीं, उसका कोई भी पता नहीं है। मनुष्य को यह भी पता नहीं है कि वह क्या है। और ऐसा मनुष्य खोज करता है परमात्मा की, परमात्मा कैसे मिलेगा? ऐसा मनुष्य खोज करता है सत्य की, सत्य कैसे मिलेगा?
परमात्मा को जानने के पहले स्वयं को जानना जरूरी है। और सत्य को जानने के पहले स्वयं को पहचानना जरूरी है। क्योंकि जो मेरे निकटतम है अगर वही अपरिचित है तो जो दूरतम है वह कैसे परिचित हो सकेगा?

तो इसके पहले कि किसी मंदिर में परमात्मा को खोजने जाएं, इसके पहले कि किसी सत्य की तलाश में शास्त्रों में भटकें, उस, उस व्यक्ति को मत भूल जाना जो कि आप हैं। पहले और सबसे पहले और सबसे प्रथम उससे ही परिचित होना होगा जो कि आप हैं।
लेकिन कोई स्वयं से परिचित होने को उत्सुक नहीं। सभी लोग दूसरों से परिचित होना चाहते हैं। दूसरों से जो परिचय है वही विज्ञान है और स्वयं से जो परिचय है वही धर्म है। दूसरों से जो परिचय है वही साइंस है, खुद से जो परिचय है वही रिलीजन है। जो स्वयं को जान लेता है, बड़े आश्चर्य की बात है, वह दूसरों को भी जान लेता है। और जो दूसरों को जानने में समय व्यतीत करता है और भी बड़े आश्चर्य की बात है वह दूसरों को तो जान ही नहीं पाता धीरे- धीरे स्वयं को जानने के द्वार भी उसके बंद हो जाते हैं।
ज्ञान की पहली किरण स्वयं से प्रकट होती है और धीरे-धीरे सर्व पर फैल जाती है। ज्ञान की पहली ज्योति स्वयं में जलती है और फिर समस्त जीवन में उसका प्रकाश, उसका आलोक दिखाई पड़ने लगता है।
मैंने पहले दिन कहा, ईश्वर मर गया है। ईश्वर इसलिए मर गया है कि कोई स्वयं को जानने की खोज में नहीं है। ईश्वर पुनरुज्जीवित हो सकता है, अगर कोई स्वयं को जाने। जो भी स्वयं को जानता है, उसके लिए ईश्वर पुनरुज्जीवित हो जाता है। और जो स्वयं को नहीं जानता है, उसके लिए ईश्वर मृत है। चाहे वह कितनी ही पूजा करे और कितनी ही अर्चनाएं और, और मंदिर बनाए, मूर्तियां बनाए और, और कुछ भी करे। वह कुछ भी करे, एक काम अगर उसने छोड़ रखा है स्वयं को जानने का, तो वह जान ले ठीक से कि परमात्मा से उसका कोई संबंध कभी नहीं हो सकेगा।
परमात्मा से संबंध की पहली बुनियादी आधारभूत शर्त है, स्वयं से संबंधित हो जाना। कैसे कोई स्वयं से संबंधित हो सकता है, उसकी ही आज बात करूंगा। क्योंकि वही सूत्र है, वही सेतु है, वही मार्ग है, वही द्वार है परमात्मा से संबंधित होने का। और तब जो परमात्मा प्रकट होता है, वह मनुष्य द्वारा निर्मित परमात्मा की कल्पना नहीं है, बल्कि वही है जो है। तब वह हिंदू का परमात्मा नहीं है, और मुसलमान का नहीं है, और जैन का, और ईसाई का नहीं है, तब वह बस परमात्मा है। उसका फिर रूप नहीं, नाम नहीं। फिर उसका आदि नहीं, अंत नहीं। फिर उसकी कोई सीमा नहीं।
वैसा जो, वैसा जो सत्य है, जो हमें सब तरफ घेरे हुए है, कैसे दिखाई पड़ेगा? और यदि हम स्वयं को जाने बिना उसे देखने की दौड़ में पड़ गए, तो वह दौड़ शुरू से ही भ्रांत है। और हम जो भी जान लेंगे उस भांति वह हमारे अज्ञान को और गहन करेगा और महान बनाएगा।
एक अंधा आदमी अपने एक मित्र के घर मेहमान था। मित्र ने उसके स्वागत में बहुत-बहुत मिष्ठान्न बनाए। उस अंधे को कुछ पसंद आया। और उसने पूछा यह क्या है? दूध से बनाई गई कोई मिठाई थी। उनके मित्र ने कहाः दूध से बनी मिठाई है। उस अंधे आदमी ने कहाः क्या तुम कृपा करोगे और दूध के संबंध में मुझे कुछ समझाओगे? मुझे कुछ बताओगे कि यह दूध कैसा होता है? मित्र ने वही किया जो तथाकथित ज्ञानी हमेशा से करते रहे हैं। वे उसको समझाने लग गए। एक मित्र ने कहाः दूध, दूध होता है शुभ्र सफेद। बगुले के पंखों की भांति, वह अंधा आदमी बोला, मजाक करते हैं मुझसे आप? मैं तो दूध ही नहीं समझ पा रहा। यह बगुला और उसके सफेद पंख! यह और एक कठिनाई हो गई। क्या मुझे बताएंगे कि यह बगुला और उसके सफेद पंख कैसे होते हैं? तो मैं पहले बगुले को समझूं, शुभ्रता को समझूं, फिर मैं दूध को समझ पाऊंगा!
पहली समस्या तो वहीं रह गई, यह दूसरा प्रश्न खड़ा हो गया कि ये बगुले के सफेद पंख कैसे होते हैं, ये बगुला कैसा होता है। मित्र अड़चन में पड़े।
एक मित्र ने तरकीब निकाली। उसने अपना हाथ उठाया। अंधे का हाथ पकड़ा, अपने हाथ पर कहा कि हाथ फिराओ और कहा कि जिस तरह मेरा हाथ मुड़ा हुआ है, इसी तरह बगुले की गर्दन लंबी और मुड़ी हुई होती है। उस अंधे आदमी ने मुड़े हुए हाथ पर हाथ फेरा। वह उठ कर नाचने लगा और बोला कि मैं समझ गया। मुड़े हुए हाथ की भांति दूध होता है। समझ गया, समझ गया कि दूध मुड़े हुए हाथ की भांति होता है। वे मित्र बहुत परेशान हो गए। इससे तो बेहतर था कि वे अंधे को न समझाते,

क्योंकि यह जानना ही अच्छा था कि नहीं जानते हैं। यह जानना तो और खतरनाक हो गया कि दूध मुड़े हुए हाथ की भांति होता है।
जिन्होंने स्वयं की आंखें खोल कर नहीं देखा है, उनके हाथों में शास्त्रों की यही गति हो जाती है, सिद्धांतों की यही गति हो जाती है। परमात्मा कैसा होता है? वह मुड़े हाथ की भांति जैसे दूध होता है, ऐसे ही परमात्मा उनकी समझ में पकड़ जाता है। वैसे गलत परमात्मा की मृत्यु हो गई है। इस पर ही इधर मैं आपसे बात कर रहा हूं। और अच्छा हुआ है। और उसकी मृत्यु से एक नई सूचना आपको देता हूं कि उसकी मृत्यु इसलिए हुई है कि आपकी आंखें बंद हैं। हम अंधे हैं। इसलिए परमात्मा को मरना पड़ा है। हमारे अंधेपन ने उसकी हत्या कर दी! क्या हम आंखें खोलने को राजी हैं? जिनको प्रेम है जीवन से, सत्य से, वे आंखें खोलने को राजी हों तो सारे जगत में परमात्मा का आलोक प्रकाशित हो सकता है। वे आंखें कैसे खुलेंगी, स्वयं के द्वार जो बंद हैं, हम कैसे खोलेंगे, उनके कुछ सूत्र आज की संध्या मैं आपसे कहूंगा।
पहला सूत्रः जैसा मैंने कहा, ज्ञान नहीं बल्कि अज्ञान। स्टेट ऑफ नॉट नोइंग। एक ऐसी चित्त की दशा, जहां हम स्पष्ट रूप से जानते हैं कि मैं कुछ भी नहीं जान रहा हूं, मुझे कुछ भी पता नहीं है। ऐसे अबोध की, अज्ञान की स्पष्ट स्वीकृति पहला सूत्र है। ज्ञान को छोड़ना पड़ेगा, यदि वस्तुतः सम्यक और सत्य जो ज्ञान है उसे पाना है तो ज्ञान को छोड़ना पड़ेगा। मनुष्य के मन पर ज्ञान बहुत बोझिल है। पत्थरों और पहाड़ों की भांति उसकी छाती पर ज्ञान सवार है। हम सब कुछ जानते हुए मालूम होते हैं। जब कि हम कुछ भी जानते नहीं हैं। पति अपनी पत्नी को भी नहीं जानता। पिता अपने पुत्र को भी नहीं जानता। इतना रहस्यपूर्ण है यह शब्द। आपके द्वार पर जो पत्थर पड़ा है, उसे भी आप नहीं जानते। आपके आंगन में जो फूल खिलते हैं, उनको भी नहीं जानते! कुछ भी तो हम नहीं जानते। जीवन इतना अननोन, इतना मिस्टीरियस, इतना रहस्य भरा हुआ है। लेकिन हमारा अहंकार कहता है कि हम सब कुछ जानते हैं। पिता का अहंकार कहता है कि तुम मेरे लड़के हो, मैं तुम्हें भली-भांति जानता हूं।
बुद्ध बारह वर्ष के बाद अपने गांव वापस लौटे, तो गांव सारा लेने गया। पिता भी लेने गए। लेकिन पिता तो बारह वर्ष के पहले के क्रोध से भरे हुए थे कि लड़का छोड़ कर भाग गया था। उन्होंने जाते ही से गौतम बुद्ध को कहाः सुनो, मैं तुम्हारा पिता हूं और तुम्हें अभी भी क्षमा कर सकता हूं। वापस लौट आओ अपने घर और क्षमा मांग लो कि तुमने भूल की है।
बुद्ध ने क्या कहा? बुद्ध ने कहाः भूल आप करते हैं। मुझे आप जानते हैं, गलत कहते हैं। स्वयं को भी जानते हों, यह भी संदिग्ध है, तो मुझे कैसे जान सकेंगे। क्या मैं आपका पुत्र हूं, इससे आप मुझे जान गए? तो भी आप भूल करते हैं। मैं आपके द्वारा पैदा हुआ हूं, लेकिन आपसे पैदा नहीं हुआ। आप मेरे लिए रास्ता थे दुनिया में आने के लिए। लेकिन मेरे बनाने वाले नहीं हैं। आप मार्ग थे, इससे ज्यादा नहीं।
अभी मैं जिस चौरस्ते से होकर आया हूं, अगर लौटते वक्त वह चौरस्ता खड़े होकर कहे कि ठहरो! मैं तुम्हें भलीभांति जानता हूं, थोड़ी देर पहले तुम मेरे पास से गुजरे थे। एक पिता अपने बच्चे से कहता है कि मैं तुम्हें भलीभांति जानता हूं। ऐसी एक गलती कर रहा है। एक चौरस्ता था पिता, जिससे बच्चा गुजरा और दुनिया में आया। लेकिन जानना और इस जानने के भ्रम में वह जो मिस्ट्री थी, वह जो रहस्य था जीवन का, उससे वह अपरिचित रह गया।
हम सभी चीजों को जानते हुए मालूम पड़ते हैं। सभी चीजों को जानते हुए मालूम पड़ते हैं। यह जानने का भ्रम छूटना चाहिए तो ही जीवन में रहस्य का जन्म होता है। तो ही अननोन और अज्ञात के प्रति आंखें खुलनी शुरू होती हैं। ज्ञात के तट से जो मुक्त नहीं होता अज्ञात के सागर की यात्रा उसके लिए नहीं है। और परमात्मा बिल्कुल अज्ञात है। और हम स्वयं बिल्कुल अज्ञात हैं। और हमारे भीतर क्या है हम नहीं जानते हैं, तो जो हम जानते हैं अगर उसी को हम पकड़े रहें तो इस अज्ञात में यात्रा नहीं हो सकेगी।
एक छोटी सी घटना कहूं, उससे शायद मेरी बात समझ में आ जाए।

एक रात एक गांव में ऐसा हुआ जैसा कि हर रात सभी गांवों में होता है--कि कुछ जवान लड़के एक शराब-गृह में गए और शराब पीकर बेहोश हो गए। जैसा कि हर रात हर गांव में होता है, उस गांव में भी हुआ। लड़के बेहोश हो गए शराब पीकर। बाहर निकले मधुशाला के, तो आकाश में चांद था। पूर्णिमा की रात थी। उन्होंने कहा कि बहुत अच्छी रात है। चलो, चलो झील पर चलें।
वे झील पर गए। एक नाव में सवार हुए। पतवारें उठाईं और उन्होंने यात्रा शुरू कर दी। रात बीत गई। वे रात भर पतवार चलाते रहे। रात भर पतवार चलाते रहे। नाव को खेते रहे, खेते रहे, खेते रहे। और सुबह जब ठंडी हवाएं आने लगीं और उनका नशा कुछ उतरा, तो उनमें से किसी ने कहा कि न मालूम कितनी दूर निकल आए, न मालूम किस दिशा में, अब तो सुबह भी होने के करीब आ गई है, अब पता लगाओ कि हम कहां आ गए हैं। वापस लौट चलें। गांव के लोग जाग चुके होंगे। उनमें से दो लोग किनारे पर नीचे उतरे और हैरानी से चिल्लाए, घबड़ाओ मत, नीचे उतर आओ, हम वहीं खड़े हैं जहां रात थे। वे नीचे उतर कर बहुत हैरान हुए। उन्होंने जंजीरें रात को खोलना भूल गए थे। नाव वहीं बंधी थी। वे पतवार तो चलाते रहे, चलाते रहे। नाव वहीं की वहीं बंधी थी। रात भर का श्रम व्यर्थ हुआ। श्रम तो बहुत किया, यात्रा तो बहुत की, लेकिन जहां थे वहीं रहे। कहीं गए नहीं।
अधिकतम लोग, जब मौत की ठंडी हवाएं आती हैं और जीवन का नशा उखड़ता है, तो पाते हैं कि किनारे पर नाव बंधी है। जहां से यात्रा शुरू की थी, वहीं खड़े हैं। क्यों? क्योंकि किनारे से जंजीर छोड़ना भूल गए।
यह जो हमारे ज्ञान का किनारा है, यह जो हम जानते हैं, जो-जो हम जानते हैं उसी से हम बंधे हैं। कोई ने एक शास्त्र पढ़ लिया है। गीता या कुरान या कुछ और। किसी ने कुछ और सुन लिया है, किसी ने कुछ और अनुभव कर लिया है, वह उससे बंधा है।
जो ज्ञान से बंधता है, वह अतीत से बंध जाता है, क्योंकि ज्ञान हमेशा बीते हुए का हो गया। वह पास्ट है, बीत गया। जो आपने जान लिया, वह अतीत हो गया। वह गया जो जान लिया, गया। वह मुर्दा हो गया, वह मर गया। उस मरे हुए के साथ जो बंधा रहता है उसकी भविष्य में यात्रा कैसे हो सकेगी? वह आगे कैसे जाएगा? और आगे कैसे जाएगा? ज्ञान तो हमेशा बीता हुआ है। जो भी आपने जान लिया, वह गया।
और परमात्मा है अनजाना, अननोन। तो इस जाने हुए से अगर हम बंध गए तो फिर
उस अनजाने को कैसे जान सकेंगे? इसलिए ज्ञान की गठरी जो उतार देता है, वही, वही उस अज्ञात सागर में यात्रा कर पाता है, जो कि परमात्मा का है और जो कि स्वयं का है।
पहला सूत्र हैः ज्ञान से मुक्त हो जाना।
लेकिन हम सब तो ज्ञान की तलाश में हैं। हम सब तो ज्ञान की तलाश में हैं। हम सब तो इस खोज में हैं कि ज्ञान कहां मिल जाए। भगवान न करे कि आपको कहीं ज्ञान मिल जाए। ज्ञान मिला कि आप वहीं बंद हो जाएंगे, वहीं ठहर जाएंगे, रुक जाएंगे। तो जो जो ज्ञानी हो जाते हैं, वहीं वहीं ठहर जाते हैं और मुर्दा हो जाते हैं। पंडित से ज्यादा मरा हुआ कोई आदमी कभी देखा है? उतना डेड? नहीं, मुश्किल है, बिल्कुल मुश्किल है, एकदम कठिन है। दुनिया में जितना पांडित्य बढ़ता है, उतना मुर्दापन बढ़ता है।
क्यों? क्योंकि वे अपने जानने से, अपने ज्ञान से बंध जाते हैं। वह बंधन, उनके चित्त को फिर उड़ान नहीं लेने देता--अनंत सागर की, आकाश की, परमात्मा की उड़ान में जाने में वे असमर्थ हो जाते हैं। उनके पैर जमीन से बंध जाते हैं। तो ज्ञात से मुक्त होने का साहस, ज्ञान से मुक्त होने का साहस ही किसी व्यक्ति को धार्मिक बनाता है। ज्ञान से मुक्त होने का साहस? पहला सूत्र हैः ज्ञान के तट से अपनी जंजीरें तोड़ दीजिए। बड़ी घबड़ाहट लगेगी। धन छोड़ देना बहुत आसान है, लेकिन ज्ञान छोड़ना बहुत कठिन है। इसलिए जो लोग धन छोड़ कर भाग जाते हैं, वे भी ज्ञान नहीं छोड़ते, धन छोड़ कर भाग जाते हैं। लेकिन उसी धन से जो किताबें खरीदी थीं, उनका बस्ता बांध कर साथ ले जाते हैं। वे ज्ञान नहीं छोड़ते। एक आदमी संन्यासी हो जाता है, घर छोड़ देता है, द्वार छोड़ देता है, पत्नी और बच्चों को छोड़ देता है। लेकिन हिंदू होने

को नहीं छोड़ता है, जैन होने को नहीं छोड़ता, मुसलमान होने को नहीं छोड़ता। कैसी अदभुत और आश्चर्य की बात है कि अब तक जमीन पर साधु पैदा नहीं हो सके! हिंदू साधु होता है, मुसलमान साधु होता है, ईसाई साधु होता है। यह भी क्या पागलपन की बात है। साधु होना चाहिए जमीन पर।
हिंदू और ईसाई और मुसलमान, ये नाम कैसे साधु के पीछे लगे हैं? असाधु के साथ ये बीमारियां लगी रहें, समझ में आता है। साधु के साथ इन बीमारियों को देख कर बहुत हैरानी होती है, बहुत आश्चर्य होता है। लेकिन ज्ञान जो पकड़ लिया गया, हिंदू का, मुसलमान का, जैन का, वह छूटता नहीं, क्यों? उसे छोड़ना क्यों नहीं चाहते?
वह भी एक आंतरिक संपदा है इसलिए, वह भी एक धन है। रुपया बाहर की संपत्ति है, ज्ञान भीतर की संपत्ति है। बाहर की संपत्ति छोड़ना बहुत कठिन नहीं है। भीतर की संपत्ति जो छोड़ता है, वही केवल परमात्मा से संबद्ध हो सकता है। क्राइस्ट ने कहा हैः ब्लेस्ड आर दि पुअर। धन्य हैं वे जो दरिद्र हैं। किनसे कहा है? उनके पास जिनके पास लंगोटी नहीं है। अगर वे ही धन्य हैं तो क्राइस्ट ने बहुत गलत बात कही है। तो उसका मतलब यह हुआ कि वह गरीबी और दरिद्रता, दीनता के समर्थन में नहीं।
क्राइस्ट ने कहा है, पुअर इन स्प्रिट। जो आत्मा से दरिद्र हैं। क्या मतलब? आत्मा से दरिद्र का मतलब क्या? जिन्होंने ज्ञान की संपदा को फेंक दिया और जिन्होंने कहा कि हमारे पास भीतर कोई संपदा नहीं है। जानने वाली। हम कुछ भी नहीं जानते, हम बिल्कुल अज्ञान में हैं। हमारा कोई ज्ञान नहीं है। जिन्होंने अतीत को, बीते को, जो गया उससे अपने को बांध नहीं रखा है। धन्य हैं वे लोग, जो दरिद्र हैं आत्मा में।
आत्मा की दरिद्रता का मतलब? आत्मा की दरिद्रता का मतलब है, जिन्होंने ज्ञान की संपत्ति को छोड़ दिया है, वे ही लोग? केवल वे ही थोड़े से लोग सत्य को, परमात्मा को जान सकते हैं।
तो क्या तैयारी है इस बात की कि आप ज्ञान को छोड़ दें? धन को छोड़ने की तैयारियां करवाने वाले लोग गलत साबित हुए हैं। धन को छोड़ने का कोई सवाल नहीं है बड़ा। धन बाहर है। अगर उसे छोड़ भी दिया तो जो उपलब्धि होगी वह केवल बाहर की होगी। ज्ञान भीतर मालूम होता है अगर उसे छोड़ा तो जो उपलब्धि होगी, वह भीतर की होगी और स्मरण रखिए, दुनिया में केवल दो ही सिक्के हैं--धन के और ज्ञान के। और दो ही तरह के लोग हैं--धन को इकट्ठा करने वाले लोग और ज्ञान को इकट्ठा करने वाले लोग।
एक बादशाह समुद्र के किनारे अपने महल में निवास करता था। एक सांझ वह खड़ा हुआ था छत पर। सैकड़ों जहाज आते थे और जाते थे समुद्र में। उसने अपने वजीर को कहाः देखते हो सैंकड़ों जहाज आ रहे हैं और जा रहे हैं। उसके वजीर ने कहाः पहले मुझे भी सैंकड़ों दिखाई पड़ते थे। कुछ दिन से मुझे केवल दो जहाज दिखाई पड़ते हैं। उस के राजा ने कहाः दिमाग खराब हो गया है? दो जहाज दिखाई पड़ते हैं? सैंकड़ों आ रहे हैं, जा रहे हैं। उसके वजीर ने कहा। हो सकता है कि मुझे गलत दिखाई पड़ता हो, लेकिन फिर भी मुझे दो ही जहाज दिखाई पड़ते हैं। एक तो धन का जहाज है और एक ज्ञान का जहाज है। और बस इन दो ही जहाजों की सारी यात्रा है। या तो कोई धन खोजने जा रहा है या कोई ज्ञान खोजने जा रहा है। धन से भी अहंकार तृप्त होता है कि इतना धन है मेरे पास। धन की खोज से तृप्ति होती है कि मैं कुछ हूं, समबडी, कोई हूं। आइडेंटिटी मिल जाती है। कपड़ा मिल जाता है धन से। भूल जाते हैं हम कि मैं अपने को नहीं जानता। धन है मेरे पास, मैं कुछ हूं। जरा किसी धनी को धक्का दें वह कहेगा, जानते नहीं कि मैं कौन हूं? लेकिन अगर उसका धन छिन जाएगा तो फिर वह यह नहीं कहेगा कि जानते नहीं कि मैं कौन हूं? वह नहीं कहेंगे। धन था तो वह कुछ थे।
एक आदमी मंत्री है तो वह कुछ है। वह मंत्री न रह जाए, जैसा कि रोज होता है, कोई मंत्री है फिर नहीं रह जाता, भूतपूर्व मंत्री हो जाता है। मर गया। वह मंत्री अब नहीं रहा। जैसे कपड़े की क्रीज निकल जाए, वैसा आदमी हो जाता है। बिल्कुल ढीला-ढाला। उसको धक्का दो, वह बिल्कुल नहीं कहता कि मैं कौन हूं। बल्कि वह कहेगा कि कहीं आपको चोट तो नहीं लग गई। लेकिन वह कल अगर

मंत्री था और आप पास से भी निकल जाते, धक्का दूर, आपकी छाया का भी धक्का लग जाता तो कहता कि ठहरो, जानते नहीं, मैं कौन हूं?
तो धन, पद, वैभव वह एक भाव देता है कि मैं कुछ हूं। इस "मैं कुछ हूं" के भ्रम में वह यह ख्याल ही भूल जाता है कि मैं नहीं जानता कि मैं कौन हूं। कुछ के भ्रम में कौन हूं, इस बात का स्मरण नहीं रह जाता।
एक और खोज है ज्ञान की। ज्ञानी को भी दंभ पैदा हो जाता है कि मैं कुछ हूं। और ज्ञानी धनी से कहीं ज्यादा दंभी होता है, क्योंकि वह यह कहता है कि यह धनी यह तो बाहर की संपत्ति में बस उलझा हुआ है। यह तो भौतिकवादी है, मैटीरियलिस्ट! हम, हम तो अध्यात्मवादी हैं, हम तो ज्ञान के खोजी हैं। धन, यह तो क्षुद्र बात है। लेकिन इस ज्ञान से भी क्या हो रहा है? इस ज्ञान से भी अहंकार मजबूत हो रहा है कि मैं कुछ हूं। ज्ञानियों की आंखों में देखिए, उनके आस-पास घूमिए और खोजिए, तो वहां शांति न मिलेगी, मिलेगा अहंकार। नहीं तो ज्ञानी शास्रार्थ करते घूमते? एक-दूसरे को हराते और पराजित करते? जहां किसी को हराने का भाव है, वहां सिवाय अहंकार के और क्या होगा? क्या ज्ञानी शास्त्र लिखते, दूसरे शास्त्रों के खंडन, निंदा, गाली-गलौज? अगर इन ज्ञानियों के शास्त्र देखें तो बहुत हैरान हो जाएंगे। जितनी गाली- गलौज की जा सकती है वह सब वहां मौजूद है। जितना, जितना जो भी मनुष्य के मन में, दूसरे मनुष्य के प्रति हिंसा, घृणा और क्रोध हो सकता है, वह सब वहां मौजूद है। यह क्या है? इन ज्ञानियों ने खुद भी लड़े और दुनिया को भी लड़ाया और ऐसी दीवालें खड़ी कर दी जिनको तोड़ना मुश्किल हुआ जा रहा है। ये दीवालें सब अहंकार की दीवालें हैं और ये ज्ञानी अगर धन को छोड़ भी दें तो छोड़ने से भी इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। अहंकार फिर भी तृप्त होता है।
एक साधु ने मुझे कहाः मैंने लाखों रुपये पर लात मार दी। एक बार कहा, दो बार कहा, तीन बार कहा। तो मैंने उनसे पूछा कि लात कब मारी? वह बोलेः कोई बीस-पच्चीस वर्ष हुए। मैंने उनसे कहाः अगर बुरा न मानें तो मैं यह कहना चाहूंगा कि यह लात ठीक से लग नहीं पाई। उन्होंने कहाः क्यों? बीस-पच्चीस वर्ष पहले जो लात मारी, उसकी अब तक याद क्यों है? उसकी स्मृति क्यों हैं? वह लग नहीं पाई होगी लात। यह बार-बार क्यों स्मरण करते हैं कि मैंने लाखों रुपये छोड़ दिए। लाखों रुपये आपके पास रहे होंगे, तब यह अहंकार, यह ईगो रही होगी कि मेरे पास लाखों रुपये हैं। जब छोड़ दिए, तबसे यह अहंकार आ गया है कि मैंने लाखों छोड़ दिए हैं।
अहंकार अपनी जगह है। आपके छोड़ने से कोई फर्क नहीं पड़ा। धनी का अहंकार होता है। त्यागी का अहंकार होता है। और त्यागी का अहंकार धनी के अहंकार से ज्यादा खतरनाक होता है, क्योंकि ज्यादा सूक्ष्म होता है और वह दिखाई भी नहीं पड़ता। वह दिखाई भी नहीं पड़ता। ज्ञानी का अहंकार होता है कि मैं जानता हूं। यह जो मैं जानने का भाव है, यह सूक्ष्मतम भीतर दीवाल है। यह नहीं जुड़ने देगी समस्त से, सर्व से। यह तोड़ देगी। अहंकार तोड़ने वाली इकाई है। वह आपको तोड़ता है सबसे। आप अकेले रह जाते हैं एक आइलैंड की तरह, एक छोटे से दीप की तरह। आप सबसे टूट जाते हैं। अहंकार तोड़ता है, इसलिए अहंकार परमात्मा की तरफ ले जाने वाला नहीं हो सकता। अहंकार किसी भी भांति अपने को भर सकता है। त्याग से, सेवा से, ज्ञान से, धन से। न मालूम किन-किन रूपों से भर सकता है। अहंकार जहां है, मैं कुछ हूं यह भाव जहां है, वहां सर्व के साथ सामंजस्य नहीं हो सकेगा, क्योंकि मैं कुछ हूं यही स्वर, सारे संगीत को विकृत कर देगा। क्या यह नहीं हो सकता कि यह "मैं" चला जाए? यह हो सकता है, यह हुआ है। जमीन पर यह आगे भी होता रहेगा। यह आपके भीतर भी घटित हो सकता है।
पहला सूत्र हैः ज्ञान जाने देना। उसे जाने दें पिघल जाने दें, बह जाने दें। उसके बहने में डर है एक कि अगर मेरा ज्ञान ही गया तो फिर मैं तो ना-कुछ हो गया। फिर तो मैं नान-बीइंग हो गया। फिर तो ना-कुछ हो गया, फिर तो नोबडी हो गया, अगर मेरा ज्ञान गया, तो जिन्हें परमात्मा को खोजना है, वे स्मरण रखें कि उन्हें ना-कुछ होना पड़ेगा। प्रेम के द्वार पर जो कुछ होकर जाता है, उसे खाली हाथ वापस लौटना पड़ता है। प्रेम के द्वार पर जो ना-कुछ होकर जाता है, उसे हमेशा द्वार खुले मिलते हैं और स्वागत मिलता है।

रूमी ने एक गीत गाया है। गाया है कि एक प्रेमी अपनी प्रेयसी के द्वार
पर गया, द्वार खटखटाए। पीछे से पूछा गया, कौन? उस प्रेमी ने कहाः मैं हूं तेरा प्रेमी! भीतर सन्नाटा हो गया। उसने बहुत बार द्वार भड़भड़ाए और कहाः बोलती क्यों नहीं हो? मैं तुम्हारा प्रेमी द्वार पर खड़ा तड़प रहा हूं और चिल्ला रहा हूं। आधी रात गए, भीतर से किसी ने कहाः लौट जाओ। यह द्वार न खुल सकेंगे, क्योंकि प्रेम के द्वार पर जो आकर कहता है कि मैं हूं! प्रेम के द्वार उसके लिए कैसे खुल सकते हैं? प्रेम के घर में दो के लिए कोई जगह नहीं है, तुम लौट जाओ!
वह प्रेमी लौट गया। और बरसातें आईं, और धूप आई, और सर्दियां, और दिन आए
और गए, और चांद उगे और गिरे और न मालूम कितने वर्ष बीते और फिर एक दिन, एक रात उस दरवाजे पर फिर दस्तक सुनी गई। और पीछे से फिर किसी ने पूछाः कौन है? बाहर से किसी ने कहाः अब तो मैं नहीं हूं, अब तो तू ही है। और कहते हैं, द्वार खुल गए। और पीछे प्रेमी को पता चला कि द्वार तो खुले ही हुए थे। केवल "मैं" के कारण बंद मालूम पड़ते थे। "मैं" नहीं था तो कोई द्वार बंद नहीं। "मैं" परमात्मा और मनुष्य के बीच रुकावट है। "मैं" पर पहली और गहरी और सूक्ष्म चोट वहां करनी होगी, जहां "मैं" की सबसे गहरी जड़े हैं। वह जो जानने का भाव, वह जो जानने का ख्याल, उसे तोड़ देना होगा। और सचाई तो यह है कि हम जानते कुछ हैं नहीं। इसलिए तोड़ने में कठिनाई क्या है? क्या जानते हैं, क्या जाना है, कुछ भी तो नहीं? जीवन ऐसे निकल जाता है जैसे पानी पर कोई लकीरें खींचता रहे। जान क्या पाता है? क्या जान पाता है? कभी सोचा है, क्या जान पाए हैं? कुछ भी नहीं! कुछ भी नहीं! लेकिन छोड़ने में भय हो सकता है। उस भय को जो पार नहीं करता, वह परमात्मा के रास्ते पर यात्री नहीं हो सकता है। उस भय को पार करना है।
पहला सूत्र हैः ज्ञान के अहंकार को चोट दें। उसे बिखरने दें, उसे जाने दें। उसको चोट देते ही एक अदभुत क्रांति भीतर मालूम होगी। जिंदगी बिल्कुल और तरह की दिखाई पड़ने लगेगी। जिस फूल के पास से कल गुजरे थे, उसी फूल के पास से गुजरेंगे तो फूल दूसरा दिखाई पड़ेगा, क्योंकि कल आप सोचते थे कि मैं जानता हूं इस फूल को। जिस फूल को आप जानते थे वह फूल ना-कुछ था, लेकिन आज जब उस फूल के पास से निकलेंगे और ज्ञात, जानते हुए कि नहीं जानता हूं इस फूल को तो शायद एक क्षण ठहर जाएं। और उस फूल को देखें। शायद वह रहस्यपूर्ण मालूम पड़े। शायद वह न मालूम कितनी दूर का संदेश लाता हुआ मालूम पड़े। उस फूल को भी अगर पूरी तरह शांति से देखें तो शायद परमात्मा के किसी सौंदर्य की झलक वहां दिखाई पड़ जाए। लेकिन जानने वाले व्यक्ति को वह नहीं दिखाई पड़ेगी, क्योंकि वह सब जगह से अंधे की भांति निकल जाता है।
यह जो ज्ञान का दंभ है, यह आदमी को अंधा कर देता है। और चीजों को देखने नहीं देता। और नहीं तो पैर के नीचे जो दूब है, परमात्मा वहां भी है। आस-पास जो लोग हैं, परमात्मा वहां भी है। हवाएं हैं, और आकाश है और बादल हैं। और सब कुछ है और जो कुछ भी है, सब कुछ, सबमें वही है। लेकिन वह दिखाई तो नहीं पड़ता, वह दिखाई नहीं पड़ सकता है, क्योंकि आंख, देखने वाली आंख नहीं है। यह जो ज्ञान रोके हुए है, सारे रहस्य के द्वार परदे की तरह, दीवालों की तरह तो पहली तो चोट ज्ञान पर करनी जरूरी है। और अगर ज्ञान पर आप चोट कर पाएं तो एक दूसरा, एक दूसरा अभिनव क्षितिज, एक नया होरीजन खुलता हुआ दिखाई पड़ेगा जो कि प्रेम का है। जो ज्ञान को छोड़ने को राजी हो पाता है, उसके लिए प्रेम के द्वार खुल जाते हैं।
दूसरा सूत्र हैः ज्ञान से तोड़ लें, अपने को और प्रेम से जोड़ लें!
यह जानने का भाव छोड़ दें और प्रेम करने के भाव को जन्म दें। जानने वाला नहीं जान पाता और प्रेम करने वाला जान लेता है। लेकिन हम तो कुछ ऐसे हजारों-हजारों वर्षों से प्रेम के विरोध में पाले गए हैं जिसका कोई हिसाब नहीं है। ज्ञान के पक्ष में और प्रेम के विरोध में पाले गए हैं। मैं आपसे निवेदन करता हूं--ज्ञान के विरोध में प्रेम के, प्रेम के जीवन में, गति करें। प्रेम में चरण रखें। अगर प्रेम की दिशा में चित्त प्रवाहित हो जाए तो परमात्मा से ज्यादा निकट कोई भी नहीं है। और अगर ज्ञान की दिशा में बुद्धि काम करने लगे तो परमात्मा से ज्यादा दूर कोई नहीं है।

विज्ञान कभी परमात्मा को नहीं जान पाएगा, क्योंकि विज्ञान की खोज उसी तथाकथित ज्ञान की खोज है। इसलिए विज्ञान जितना बढ़ता जाता है, वह कहता है कि नहीं, कोई ईश्वर कहीं नहीं मिलता। साइंस जितनी बढ़ती जाती है, उतनी वह कहती है, कहीं कोई ईश्वर नहीं मिलता। कोई ईश्वर नहीं है, ईश्वर गया। विज्ञान इसी तथाकथित ज्ञान की अंतिम चरम परिणति है, लेकिन प्रेम तो कदम-कदम पर परमात्मा को पाता है। प्रेम तो हिल भी नहीं पाता बिना परमात्मा के। वह सब जगह है। लेकिन प्रेम की भाषा को गणितज्ञ कैसे समझेगा? ज्ञानी कैसे समझेगा? प्रेम की भाषा उसकी समझ में बिल्कुल भी नहीं आती।
एक फकीर था। वह प्रेम के गीत गाता और प्रेम की बातें करता और अनेक लोग उससे कहते कि तुम परमात्मा की बातें नहीं करते हो। वह कहता कि परमात्मा की बातें क्या करें? जो प्रेम को ही न जानते हों, उनसे परमात्मा की बातें करना नासमझी है। तो वह कहता, हम तो प्रेम की ही बातें करते हैं।
जो प्रेम को नहीं जानते, उनसे परमात्मा के लिए क्या कहें? जिन्होंने दीया नहीं देखा, उनसे सूरज की क्या खबर कहें? उन्हें क्या संदेश दें सूरज का? हम तो वह मिट्टी के दीये की ही बात करते हैं, सूरज की बात नहीं करते हैं। और जिसने दीया देख लिया हो, उससे भी क्या फिर सूरज की बात करनी! क्योंकि जिसने दीया देख लिया, उसने सूरज भी देख लिया। तो वह कहता, हम परमात्मा की बात कभी करते ही नहीं हैं।
प्रेम की बात करता था। लेकिन एक पंडित पहुंचा और उसने कहा कि तुम प्रेम ही प्रेम रटे जाते हो। यह भी पता है, प्रेम कितने प्रकार का होता है? जो कि हमेशा पंडित यह पूछता है, कितने प्रकार का प्रेम होता है? कितने प्रकार के सत्य होते हैं? कितने प्रकार के ईश्वर होते हैं? वह तो हर जगह यही बातें पूछता है। पंडित ने उस फकीर से भी पूछा कि कितने प्रकार का प्रेम होता है, मालूम है? वह फकीर बोला, हैरान कर दिया तुमने! प्रेम तो हम जानते हैं। प्रकार का हमें आज तक कोई पता नहीं चला। यह प्रकार क्या होता है? प्रेम में और प्रकार?
पंडित हंसा, उसने कहाः अब हंसने की बारी मेरी है। उसने अपनी झोली से किताब निकाली और कहा कि यह किताब देखो। इसमें लिखा है कि प्रेम पांच प्रकार का होता है और तुम प्रेम-प्रेम की बकवास कर रहे हो, प्रकार तक का पता नहीं। क्या खाक तुम्हें प्रेम का पता होगा? अभी अ ब स भी नहीं आता तुम्हें प्रेम का, अभी प्रकार का भी मालूम नहीं। यह तो पहली क्लास है प्रेम की कि पहले प्रकार सीखो, प्रेम के संबंध में शास्र पढ़ो, प्रेम के सिद्धांत सीखो, फिर प्रेम की बातें करना। वह फकीर बोला कि भूल हो गई मुझसे! हम तो प्रेम ही करने लगे सीधा, यह तो गलती हो गई। प्रकार सीखने थे, किसी प्रेम के विद्यालय में भर्ती होना था। यह नहीं हो पाया। यह गलती हो गई। उसने कहा तो सुनो! मैं अपना शास्त्र तुम्हें सुनाता हूं। उसने अपना शास्त्र सुनाया। बड़ी बारीक व्याख्या थी। जैसा कि पंडितों की हमेशा से आदत रही है। वे बारीक व्याख्याएं करते रहे हैं, बिना इस बात को जाने कि जिसकी वे व्याख्या कर रहे हैं वह कहीं है ही नहीं।
उसने बड़ी बारीक व्याख्या की। बड़े सूक्ष्म तर्क उठाए। जबाब दिए और फकीर शांति से सुनता रहा। तो पंडित ने सोचा कि ठीक है। फकीर प्रभावित हो रहा है, क्योंकि पंडित एक ही बात जानता है। या तो उससे विवाद करो और या फिर शांत हो जाओ। विवाद मत करो। उसने देखा कि विवाद नहीं करता है तो मान रहा है। पीछे उसने कहा कि सुनी पूरी बात? समझ में आई? कैसा लगा? तुम्हें कैसा लगा मेरी बात को सुनकर?
उस फकीर ने कहा कि मुझे ऐसा लगा। और एक गीत गाया और खड़े होकर वह फकीर नाचा और उसने कहा कि मुझे ऐसा लगा, जैसे एक दफा, शायद तुमने कहीं सुना हो, जैसा एक दफा एक फूलों की बगिया में एक सोने का जौहरी, सोने के कसने के पत्थर को लेकर घुस आया था और माली से बोला था कि देखो, कौन-कौन फूल सच्चे हैं। मैं अभी पता लगाता हूं और अपने सोने के कसने के पत्थर पर फूलों को घिस-घिस कर देखने लगा था और सभी फूल कच्चे साबित हुए। सभी फूल झूठे साबित हुए। तो जैसा उस माली को लगा था, वैसा ही मुझे लगा, जब तुम प्रेम के प्रकार करने लगे।

प्रेम की भाषा अभेद की भाषा है, ज्ञान की भाषा भेद की भाषा है। ज्ञान तोड़ता है। ज्ञान विश्लेषण करता है, एनालिसिस करता है। प्रेम जोड़ता है, सिंथेसिस करता है। जोड़ना और तोड़ना! विज्ञान तोड़ता है। तोड़ता चला जाता है। तोड़ता चला जाता है। आखिर में मिलता है एटम, अणु, आखिरी टुकड़ा। प्रेम-धर्म जोड़ता चला जाता है, जोड़ता चला जाता है, जोड़ता! आखिर में मिलता है परमात्मा! विज्ञान परमाणु पर पहुंचता है, क्योंकि तोड़ता है, तोड़ता है, तोड़ता है। प्रेम परमात्मा पर पहुंचता है, क्योंकि जोड़ता है, जोड़ता है, जोड़ता है! जोड़ने से द्वार मिलेगा परमात्मा का, तोड़ने से नहीं। इसलिए पहला सूत्र हैः ज्ञान छोड़ दें।
दूसरा सूत्र हैः प्रेम को फैलने दें और विकसित होने दें। लेकिन कैसे
यह प्रेम फैलेगा और विकसित होगा? क्या कोई जबरदस्ती? क्या जबरदस्ती किसी को जाकर प्रेम करना शुरू कर दीजिएगा? वैसे लोग भी हैं, जो जबरदस्ती भी प्रेम करते हैं, इस आशा में कि शायद परमात्मा मिल जाए। सेवा करते हैं।
एक स्कूल में एक पादरी ने बच्चों को समझाया कि तुम प्रेम करो, सेवा करो। बिना एक सेवा का काम किए सोओ ही मत। दूसरे दिन उसने उन बच्चों से पूछा कि तुमने कोई सेवा का, प्रेम का कृत्य किया? तीन बच्चों ने हाथ उठाए कि हमने किया। बड़ा खुश हुआ। तीस बच्चे थे। कम से कम तीन ने तो बात मानी। एक बच्चे को खड़ा किया और उसने पूछा कि तुमने क्या प्रेम का कृत्य किया? उसने कहाः मैंने एक बूढ़ी स्री को सड़क पार करवाई। उस पादरी ने कहा कि धन्यवाद। बहुत अच्छा किया। दूसरे से पूछाः तुमने क्या किया? उसने कहा मैंने भी एक बूढ़ी स्री को सड़क पार करवाई। पादरी को थोड़ा सा ख्याल हुआ कि इन दोनों ने! उसने कहा तुमने भी अच्छा किया। तीसरे बच्चे से पूछा कि तुमने क्या किया? उसने कहा कि मैंने भी एक बूढ़ी स्री को सड़क पार करवाई! वह थोड़ा हैरान हुआ। उसने कहाः क्या तुम तीनों ने एक ही सेवा का कृत्य किया? तुमको तीन बूढ़ी स्त्रियां मिल गईं, जिनको सड़क पार करवाई? उन्होंने कहाः नहीं-नहीं, आप गलत समझे, तीन नहीं थीं, बूढ़ी तो एक ही थी। हम तीनों ने उसी को पार करवाया था। तो उसने पूछा कि क्या तीन, तुम तीन जनों की सहायता की जरूरत पड़ी उसको पार कराने में? उन्होंने कहाः वह पार होना ही नहीं चाहती थी। हम जबरदस्ती किसी तरह पार किए। वह तो भागती थी। पार होना ही नहीं चाहती थी।
ये जो सेवक सारी दुनिया में सेवा और सर्विस करते हुए मालूम पड़ते हैं,
ये इसी तरह के खतरनाक लोग हैं। इनसे ज्यादा मिस्चिवियस आदमी दुनिया में दूसरे नहीं हैं। जबरदस्ती सेवा किए चले जाते हैं। ये उन बूढ़े लोगों को सड़क पार करवा देते हैं, जिनको पार करना ही नहीं था।
दुनिया में सेवकों ने जितना उपद्रव किया है, उतना और किसी ने भी नहीं। ये, ये सोच रहे हैं कि हम इस भांति अपना मोक्ष तय कर रहे हैं। आपकी क्या फिकर कि आपको सड़क पार करनी है कि नहीं करनी। हम अपने मोक्ष का इंतजाम कर रहे हैं। आपको करनी हो, न करनी हो। हम आपको पार करवाए देते हैं।
इस तरह कोई जबरदस्ती प्रेम और सेवा उत्पन्न नहीं होती है। प्रेम कृत्य नहीं है, एक्ट नहीं है। प्रेम आपका प्राण बने, तो ही अर्थपूर्ण है। प्रेम आपका प्राण कैसे बनेगा? प्रेम आपका प्राण कैसे बनेगा? कैसे यह संभव होगा कि प्रेम आपसे प्रवाहित हो उठे?
एक छोटी सी बात अगर ख्याल में आ जाए तो प्रेम के प्रवाहित होने में कोई भी बाधा नहीं है। और वह छोटी सी बात यह है, यह नहीं कि आपके प्रेम से दूसरों को लाभ होगा, बल्कि वह छोटी-सी बात यह है कि प्रेम के अतिरिक्त आप कभी भी आनंद में प्रतिष्ठित नहीं हो सकते हो।
प्रेम आनंद में प्रतिष्ठा देता है। प्रेम किसी का कल्याण नहीं है। प्रेम आपका ही आनंद है। कभी आपने कोई ऐसा आनंद जाना है, जो प्रेम से रिक्त और शून्य रहा हो? जब भी आप आनंद में रहे होंगे, तब जरूर किसी प्रेम की दशा में ही आनंद में रहे होंगे। लेकिन प्रेम में खुद को खोना पड़ता है, छोड़ना पड़ता है। खुद को खोना पड़ता है, छोड़ना पड़ता है। खुद को छोड़ने की सामर्थ्य जिसमें है, उसी के भीतर उसके प्राण प्रेम से भर सकते हैं। हम अपने को जरा भी छोड़ने को राजी नहीं है, जरा भी छोड़ने को राजी नहीं हैं। हम अपने को खोने

को राजी नहीं हैं। हम तो अपने को बचाना चाह रहे हैं, बचाना चाह रहे हैं, बचाना चाह रहे हैं।
एक राजा का रथ सुबह-सुबह सड़क पर आया, बड़ी धूल उड़ाता हुआ। जैसा सभी राजाओं के रथ धूल उड़ाते हैं। न मालूम कितने लोगों की आंखें उससे अंधी हो जाती हैं। वह राजा का रथ भी धूल उड़ाता हुआ आया। एक भिखारी ब्राह्मण सुबह-सुबह घर के बाहर निकला था, अपनी झोली लेकर भिक्षा मांगने। खाली झोली थी। लेकिन बिल्कुल खाली नहीं थी। झोली में कुछ चने के दाने, कुछ चावल के दाने उसने रख लिए थे।
भिखारी भी बहुत सी बातें जानते हैं। झोली अगर खाली हो तो देने वाला जरा देने में अड़चन पैदा करता है। झोली थोड़ी भरी हो तो देने वाले को ऐसा लगता है औरों ने भी दिया है कुछ, हम भी दें। तो सभी भिखारी अपनी झोली में थोड़े से दाने घर से डाल कर निकलते हैं। सभी भिखारी और यहां कोई मौजूद हों और न डाल कर निकलते हों तो गलती करते हैं। उनको डाल कर निकलना चाहिए। और यहां बहुत से मौजूद होंगे, क्योंकि ऐसा आदमी खोजना कठिन है, जो भिखारी न हो। जो कुछ भी मांग रहा है, वह भिखारी है। वह भिखारी झोली डालकर बाहर निकला।
सामने ही सूरज निकलता था। और राजा का रथ भी आ गया। उसने सोचा, धन्य हैं मेरे भाग्य! रोज-रोज तो वह राजा के द्वार पर, संतरी से ही भीख के दो दाने लेकर वापस लौट आता था। राजा का दर्शन भिखारी को कैसे हो? राजा के दर्शन के लिए तो खुद राजा होना चाहिए। वह था भिखारी। आज सौभाग्य था कि राजा मार्ग पर ही मिल गया है उसने कहाः आज तो रथ को रोक कर और झोली फैला दूंगा और जन्म-जन्मों को सफल हो जाऊंगा, कृतार्थ हो जाऊंगा।
रथ आ भी गया। रथ रुक भी गया। राजा नीचे उतर भी आया, लेकिन भिखारी तो आखिर भिखारी ही था। वह इतना घबड़ा गया राजा के समक्ष कि वह भूल ही गया कि झोली फैलानी है। और इसके पहले कि उसे स्मरण आए कि वह झोली फैलाए, राजा ने खुद अपनी झोली उसके सामने फैला दी।
ऐसा मजाक कभी-कभी हो जाता है कि भिखारी के सामने राजा अपनी झोली फैला देता है। वह भिखारी बड़ी मुश्किल में पड़ गया है। उस भिखारी की पीड़ा आप अनुभव कर सकते हैं, सब अनुभव कर सकते हैं, उसने कभी भी दिया नहीं था। उसने हमेशा पाया था। उसने कभी देने की कल्पना भी नहीं की थी। उसने हमेशा मांगा था। देना यह वह जानता ही नहीं था।
आप जानते हैं देना? देना मुश्किल से कभी कोई जानता है। देना कोई भी नहीं जानता। पाना सभी जानते हैं। उसने भी नहीं जाना था। वह भी एक सामान्य जन था बेचारा! उसके हाथ झोली में जाते थे और खाली वापस लौट आते थे। उसकी हिम्मत कड़ी न हो पाती थी कि मुट्ठी भर दाने उठाऊं और झोली में डाल दूं। मुट्ठी भर दाने देना कठिन। लेकिन राजा ने कहा कि जल्दी करो। मुझे जाना है। जो भी दे सको, दे दो। इंकार करना भी कठिन। तो उसने बहुत मुश्किल से, बहुत मुश्किल से एक चावल का दाना निकाला और राजा की झोली में डाल दिया! हिम्मत तो की। एक दाना देने की भी हिम्मत कौन करता है। राजा गया, बैठा और रथ चला गया।
धूल उड़ती रह गई और वह भिखारी पछताता खड़ा रह गया कि यह तो उलटा हो गया।
एक दाना और चला गया। एक दाना, कितनी मुश्किल से मिलता है। और वह सारे सपने डुबा गए, जो मैंने सोचे थे कि राजा से मिल जाएंगे। यह तो उलटा हो गया। उस दिन भिखारी दिन भर दुखी रहा। हालांकि दिन भर में उसे बहुत-बहुत दाने मिले, जितने कि कभी न मिले थे। दिन भर में उसकी झोली पूरी भर गई।
सांझ आया तो झोली में जगह न थी, लेकिन आज दुखी था। क्योंकि एक दाना उसे देना पड़ा था। एक दाना कम हो गया था। कितना ही भर गई झोली, लेकिन आज जितनी झोली कभी भी नहीं भरी थी। शायद शुभ मुहूर्त हुआ था। शायद सुबह शुभ घड़ी हुई थी, शायद देने के कारण उसके भाग्य, सौभाग्य में परिवर्तित हो गए थे, एक दाना देने के कारण उस दिन उसे बहुत मिला था, लेकिन वह दुखी था, पछताता था। घर आया तो उदास था।
उसकी पत्नी ने पूछाः इतने दुखी, इतने उदास? उसने कहा कि हां! आज सुबह
ही कुछ देना पड़ा। एक दाना कम लेकर घर लौटा हूं। उसने झोली उलटाई, अभी तक

उदास था। झोली उलटा कर रोने लगा। क्योंकि उस भरी झोली में एक चावल का दाना सोने का हो गया था और अब वह छाती पीट-पीट कर रोने लगा कि यह तो बड़ी भूल हो गई। मैंने सारी झोली क्यों न राजा के पात्र में उलटा दी? तो आज सब सोना हो जाता। लेकिन अब मैं क्या करूं? अब क्या द्वार है, अब क्या मार्ग है?
जो दिया जाता है, वह सोने का हो जाता है। देने वाला हृदय, प्रेम करने वाला हृदय है। मांगने वाला हृदय, प्रेम करने वाला हृदय नहीं है। इसलिए मंदिर में जाकर परमात्मा से जो मांगता है कि मुझे यह दें, मुझे वह दें, वह प्रार्थना नहीं कर रहा है, वह मांग रहा है। धन्य है वह, जो मंदिर में जाकर दे देता है अपने को।
फरीद एक फकीर था अकबर के समय में। उसके गांव के लोगों ने कहाः अकबर तुम्हें बहुत प्रेम करता है तो जाओ, अकबर से कुछ गांव की सहायता करवाओ और गांव में एक स्कूल खुलवा दो। तो फरीद गया। सुबह-सुबह जल्दी-जल्दी गया, अकबर तो नमाज पढ़ता था। तो फरीद पीछे जाकर खड़ा हो गया। उसने सोचा नमाज पूरी हो जाए तो मैं कहूं, और मौका भी अच्छा है। शायद इस समय अकबर इंकार भी न करे। अकबर ने नमाज पूरी की और हाथ ऊपर उठाए, उसे पता भी नहीं था कि पीछे कोई खड़ा है। उसने हाथ ऊपर उठाए और कहाः हे परमात्मा! मेरे राज्य को और बड़ा कर मेरे धन को और बड़ा कर, मेरी दौलत को और दुगुना कर, मुझ पर कृपा कर। फरीद ने यह सुना, वह चुपचाप बिना आवाज किए वापस लौट आया। अकबर उठा तो उसने देखा फरीद सीढ़ियां उतर रहा है तो वह भागा। उसने पूछा, आए और चले और बिना कुछ कहे?
उस ने कहाः बड़ी भूल हो गई। मैं तो तुम्हें बादशाह समझता था, पाया कि तुम भी भिखारी हो और मैं तो सोच कर आया था कि तुमसे आज कुछ मांग लूंगा, लेकिन मैंने पाया कि तुम तो खुद ही मांग रहे हो। तो एक मांगने वाले से मांग कर उसे दुख दूं यह मुझ से न हो सकेगा। और फिर अगर अब मांगना ही होगा तो जिससे तुम मांग रहे थे, उसी से हम मांग लेंगे। हम वापस जाते हैं।
यह जो, यह जो मांगने वाला हृदय है, यही प्रेम न करने वाला हृदय है। हम
सब चौबीस घंटे मांग रहे हैं। मांग रहे हैं, मांग रहे हैं। और जब सभी लोग मांग रहे हैं तो जिंदगी अगर घृणा से भर जाए और हिंसा से, तो आश्चर्य क्या! और अगर ईश्वर की हत्या हो जाए तो आश्चर्य कैसा! इसमें कौन से आश्चर्य की बात है।
नहीं, मांगने वाला हृदय धार्मिक हृदय नहीं है। बांटने वाला, देने वाला। और जरूरी नहीं है कि आप अपना कपड़ा बांट दे और धन बांट दे। यह सवाल नहीं है। हृदय, बांटने वाला भाव, हृदय में बांटने वाला भाव। चौबीस घंटे मौके हैं, चौबीस घंटे चुनौतियां हैं, चौबीस घंटे चैलेंज है। सब तरफ से, सब तरफ से, सब तरफ से मौका है कि प्रेम आपके भीतर जगे और फैले।
लेकिन इस प्रेम के लिए, खोना पड़ेगा खुद को, देना पड़ेगा खुद को। खुद को खोए बिना कोई रास्ता नहीं है। और खोने के दो रास्ते हैं--या तो नशा करें और अपने को खो दें, जैसा कि सब लोग करते हैं। शराब पीते हैं और खुद को खो देते हैं। राम-राम, राम-राम जपते हैं और इतनी देर जपते हैं कि दिमाग ऊब जाता है और नींद आ जाती है और खो जाते हैं। कोई नाटक देखता है, संगीत सुनता है और मूर्च्छित हो जाता है और खो जाता है। अपने को भुला लेने के लिए फॉरगेटफुलनेस के बहुत से रास्ते हैं। एक तो यह खोना है। यह खोना हम सारे लोग जानते हैं। यह खोना नहीं, यह सोना है। यह मूर्च्छित हो जाना है। यह नींद में चले जाना है।
एक और खोना है प्रेम में। प्रेम में जो खोता है, उसे आत्मा का स्मरण आ जाता है और नशे में जो खोता है, उसे तो आत्मा का स्मरण और भी भूल जाता है। प्रेम में कैसे खोएं, क्या करें? क्या करने से यह हो सकता है? एक बात--अगर आंख खुल जाए तो प्रेम आपसे बहेगा और आप खो सकेंगे और वह बात यह है--स्वयं को एक इकाई की तरह समझ लेना भूल है।
आप पैदा हुए, आपको पता है, कैसे और कहां से? आप मर जाएंगे। पता है कहां
और क्यों? आप जीवित हैं, पता है कैसे? आपकी श्वास चल रही है। पता है कैसे चल रही है? कौन चला रहा है? क्यों चल रही है?

लेकिन कहते हम यही हैं, मैं श्वास ले रहा हूं। कभी आपने ख्याल किया है
कि इससे झूठी कोई बात हो सकती है कि आप कहें कि मैं श्वास ले रहा हूं। अगर आप श्वास ले रहे हैं फिर तो दुनिया में कोई आपको मार न सकेगा। वह मारे, आप श्वास लेते चले जाएं, फिर क्या होगा? फिर तो मृत्यु कभी न आ सकेगी किसी की, क्योंकि वह श्वास ही लेता चला जाएगा। मृत्यु क्या करेगी?
लेकिन हम कहते हैं मैं श्वास ले रहा हूं। श्वास हम लेते नहीं, श्वास
चल रही है और कहते हम यह हैं कि मैं श्वास ले रहा हूं। जिंदगी को भी हम कहते हैं, मेरा जन्म। झूठ है बात। जन्म हो रहा है। मेरा जन्म, क्या हो रहा है, मैं कहां हूं उस जन्म में? कहते हैं मेरी मृत्यु, कहते हैं मेरी श्वास, मेरा जीवन। इस मैं को हम व्यर्थ ही जोड़ते चले जाते हैं, जो कि कहीं भी सच्चा नहीं है जो कि है ही नहीं। इसको जोड़ते-जोड़ते हम मन में इतना कल्पित कर लेते हैं। लगने लगता है कि "मैं हूं"। और वह "मैं हूं" मांगने लगता है, क्योंकि बिना मांगे वह मजबूत नहीं हो सकता। वह इकट्ठा करने लगता है, धन, ज्ञान, त्याग और पूछने लगता है, मैं मोक्ष कैसे जाऊं? स्वर्ग कैसे जाऊं? परमात्मा को कैसे पाऊं? वह सब "मैं" की ही कोशिशें हैं। वह, वही "मैं" जो है ही नहीं!
तो मैं आपसे यह नहीं कहता कि आप अहंकार छोड़ने की कोशिश करें। अगर आपने कोशिश की तो कभी न छोड़ पाएंगे, क्योंकि छोड़ने की कोशिश कौन करेगा? वही मैं। और हो सकता है कि एक दिन वह यह घोषणा कर दे कि मैं अब बिल्कुल अहंकारी नहीं हूं। मैं तो बिल्कुल विनम्र हो गया, ह्युमिलिटी आ गई है मुझमें। मैं तो बिल्कुल विनम्र हूं, अहंकार तो मुझ में है ही नहीं। तो भी वह अहंकार ही होगा। फिर क्या करें? करें यह कि अपने भीतर...
राजमहल के निकट पत्थरों का ढेर लगा हुआ था। एक बच्चा वहां खेलता आया
और उस बच्चे ने पत्थर उठाया और राजमहल की तरफ फेंका। पत्थर ऊपर उठा, पत्थर ऊपर उठा, पत्थर जिसकी आदत हमेशा नीचे जाने की है, वह ऊपर उठा। तो स्वाभाविक उसने नीचे पड़े हुए पत्थरों से कहाः मित्रो, मैं जरा आकाश की सैर को जा रहा हूं।
यह बात बिल्कुल ठीक थी, बिल्कुल उचित थी, स्वाभाविक थी। नीचे पड़े पत्थर, नीचे पड़े थे। अपनी वेदना से दबे थे, हिल भी नहीं सकते थे। उड़ने की तो बात दूर!
यह कोई महापुरुष पैदा हो गया था पत्थरों में, जो ऊपर जा रहा था। यह कोई अदभुत अवतारी पुरुष मालूम होता था, जो ऊपर जा रहा था। पत्थरों के लिए कल्पनातीत था ऊपर की तरफ जाना और वह जा रहा था और उस पत्थर को भी यह कैसे ख्याल होता कि मैं नहीं जा रहा हूं। ख्याल हुआ मैं जा रहा हूं, उठा ऊपर। जाकर महल की कांच की खिड़की से टकराया। कांच चकनाचूर हो गया। उस पत्थर ने कहाः मैंने कितनी दफा नहीं कहा, मेरे रास्ते में कोई न आए, नहीं तो चकनाचूर हो जाएगा। बिल्कुल ही ठीक थी बात। कोई झूठ भी न थी। चकनाचूर होकर कांच पड़ा था नीचे, रो रहा था, आंसू बहा रहा था।
पत्थर ने कहाः कितनी दफा नहीं कहा? लेकिन न मालूम नासमझों को समझ में नहीं आता मेरे बीच में आ जाते हैं और फिर टूटना पड़ता है। हमारे बीच में आने की जुर्रत कोई भी न करे। जो भी आएगा, मिटेगा। पत्थर ने ठीक ही कहा। वह नीचे गिरा। कालीन था महल में बिछा, उस पर गिर गया। उसने कहा कि थोड़ा थक गया हूं। एक शत्रु का सफाया किया। लंबी यात्रा की और ऐसी यात्रा जो कि मेरे वंशजों ने कल्पना नहीं की कभी। मेरे पूर्वजों ने कभी जिसकी कामना नहीं की, ऐसी एक महान और अभिनव यात्रा मैंने की। थोड़ा विश्राम कर लूं।
वह विश्राम करने को बैठ गया। कालीन पर गिरा था। लेकिन उसने कहा कि मैं बैठ जाऊं और विश्राम कर लूं। और उसने कहा कि धन्य है यह राजपरिवार। कितने अच्छे लोग हैं? ज्ञात होता है मेरे आने की खबर पहले ही कर दी गई। कालीन बिछा दिए गए हैं। अच्छे लोग मालूम होते हैं। और तभी राजमहल का नौकर दौड़ा हुआ आया आवाज सुन कर! उसने पत्थर को उठाया और उस पत्थर ने कहाः कैसे भले लोग हैं, कितने अतिथि-प्रेमी कि मुझे उठा कर मेरा स्वागत किया जा रहा है? और उसने नौकर ने उस पत्थर को वापस फेंका। पत्थर लौटने लगा और उसने अपने मन में कहा कि अब घर की बहुत याद आती है, बहुत होमसिकनेस मालूम होती

है, बहुत घर की याद आती है। चलूं, मित्रों की बहुत याद आती है। वह नीचे आकर अपने पत्थर की ढेरी में गिरा तो उसने कहाः मित्रो! एक अदभुत यात्रा करके आ रहा हूं। और पत्थर चकित आंखें फाड़े देखते रह गए और उन्होंने कहा कि धन्य हो तुम जो तुमने हमारे बीच जन्म लिया और इतना महान कार्य किया। तुम अपनी आत्म-कथा लिखो, ऑटोबायोग्राफी लिखो। बच्चों के काम आएगी। आगे काम आएगी। बच्चे पढ़ेंगे और प्रसन्न होंगे और जानेंगे कि उनके बीच कोई पैदा हुआ था।
और वह पत्थर फूल कर और बड़ा हो गया।
इसी तरह तो पत्थर फूल कर पहाड़ हो जाते हैं। वह पत्थर फूल कर पहाड़ हो गया, अहंकार कि मैं! वह अपनी आत्म-कथा लिख रहा है। सुनते हैं जल्दी छपेगी।
जल्दी ही लोगों को मिलेगी। कई पत्थरों ने पहले लिखी है। वह भी लिख रहा है। हमारा जीवन इस पत्थर से भिन्न है? नहीं। नहीं। बिल्कुल भी नहीं। जन्म अज्ञात, मृत्यु अज्ञात, यात्रा अज्ञात, और हम कहते हैं--मैं। इससे ज्यादा झूठा और क्या हो सकता है? पत्थर के लिए झूठ था। आपके लिए सच है, अगर ऐसा फर्क करते हैं, पत्थर से भी गए-बीते हैं। पत्थर के लिए झूठ था। आपके लिए तो और भी झूठ है। और पत्थर तो पत्थर ही था।
अगर उसको यह पागलपन का यह ख्याल भी आ गया तो भी ठीक है। आप तो पत्थर नहीं हैं। लेकिन मनुष्य-जाति के भी, जिनके हृदय जितने ज्यादा पत्थर हैं, उतने ही ज्यादा उनको यह ख्याल आता है कि "मैं" हूं। जो जितना पाषाण है, अपने हृदय में पत्थर, उसको ख्याल आता है "मैं" हूं। इस "मैं" को समझें। इस आई को, इस ईगो को देखें। यह पत्थर की कहानी से ज्यादा आपकी कहानी भी सिद्ध न होगी।
और जिस दिन यह दिखाई पड़ जाए तो "मैं" को छोड़ना नहीं पड़ेगा, वह विलीन हो जाएगा, वह पाया ही नहीं जाएगा, एक हंसी आएगी और लगेगा कि अरे! "मैं" तो था ही नहीं। और जिस दिन यह दिखाई पड़ जाएगा कि "मैं" नहीं हूं, उसी दिन दिखाई पड़ेगा वह, जो है। उसका नाम ही परमात्मा है। और उसी दिन वह बहने लगेगा, जिसका नाम प्रेम है। और उसी दिन सारे हृदय के द्वार, एक प्रेम की गंगा, चारों तरफ बहने लगेगी और एक प्रकाश और एक आनंद और एक थिरक और एक संगीत प्राणों में पैदा हो जाएगा। उस पुलक, उस संगीत का नाम ही धर्म है। और उस पुलक, उस संगीत, उस प्रेम, उस आलोक में जो जाना जाता है, उसी का नाम परमात्मा है।
पत्थरों का परमात्मा मर गया है! और अगर हम प्रेम के परमात्मा को जन्म
न दे सके तो फिर मनुष्य-जाति को बिना परमात्मा के रहना होगा। और सोच सकते हैं कि बिना परमात्मा के मनुष्य-जाति क्या होगी?
पत्थर, क्योंकि जहां प्रेम नहीं है वहां पत्थर होंगे और जहां परमात्मा नहीं है, वहां पत्थर होंगे। जीवन में जो भी पाने जैसा है, वह प्रेम है। क्यों? क्योंकि प्रेम परमात्मा की सुगंध है। और जो प्रेम को पा लेता है, वह धीरे-धीरे सुगंध के मूल स्रोत को पा लेता है। वह परमात्मा किसी का भी नहीं है और वह परमात्मा सबका है। और वह परमात्मा किसी मंदिर और मस्जिद में कैद नहीं है। और वह परमात्मा किसी मूर्ति में आबद्ध नहीं है। और वह सब तरफ फैला है।
लेकिन उसे देखने वाली प्रेम की आंखें चाहिए। अंधे शास्त्रों को पढ़ते रहें, कुछ भी न होगा। और प्रेम की आंख वाले आंख खोल कर देख लें और सब हो जाता है।
मैंने कहा कि ईश्वर मर गया है। जिम्मेवारी आप पर है। ईश्वर पुनरुज्जीवित हो सकता है। आपके प्रेम से, आपके आनंदित हो उठने से, आपके अहंकार के विलीन हो जाने से।
ये दो सूत्र मैंने कहे, ज्ञान के तट से जंजीरें तोड़ लें और प्रेम के आकाश में यात्रा को खोल दें। पाल खोल दें। प्रेम की हवाएं उसे ले जाएं। लेकिन ये दोनों ही बातें तभी हो सकती हैं, इन दोनों के बीच में एक मध्य-बिंदु है, वह मैंने आपसे अंत में कहा--वह आपका अहंकार, अहंकार छोड़ें तो ही ज्ञान से छुटकारा हो सकता है और अहंकार जाए तो ही प्रेम के और परमात्मा के द्वार खुल सकते हैं। और अहंकार बिल्कुल भी नहीं, उसको विदा करना है जो है

ही नहीं, उससे हाथ जोड़ लेने हैं जो है ही नहीं, उसे मिटा देना है जो है ही नहीं, ताकि उसे पाया जा सके जो है, सदा से है, सदा रहेगा। अभी है, यहीं है।

मेरी इन बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत आनंदित हूं।
सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

क्या ईश्वर मर गया है?
चौथा प्रवचन

प्रेम की भाषा

मेरे प्रिय आत्मन्!
ईश्वर मर गया है। कैसे पुनरुज्जीवित हो सकता है, इस संबंध में पिछले तीन दिनों में थोड़ी सी बातें मैंने आपसे कही। उस बाबत बहुत से प्रश्न यहां आए हैं। उनमें से थोड़े प्रश्नों का, जो कि सभी प्रश्नों के प्रतिनिधि प्रश्न हैं, मैं आपको उत्तर दूंगा।
सबसे पहले तो बहुत से मित्रों ने यह पूछा हैः यह बात सुन कर कि ईश्वर
मर गया है, हमें बहुत दुख हुआ?
आपको दुख हुआ, इस बात से मुझे बहुत खुशी होगी, क्योंकि मैं ऐसे लोगों
को भी जानता हूं, जिनसे मैंने कहा, ईश्वर मर गया है, तो उन्होंने कहा, मर जाने दो, हर्जा क्या है? मैं ऐसे लोगों को भी जानता हूं जिनसे मैंने कहा, ईश्वर मर गया है, तो उन्होंने कहा, कौन? ईश्वरलाल ठेकेदार? अच्छा आदमी था बेचारा, कैसे मर गया? मैं ऐसे लोगों को भी जानता हूं, जिनसे मैंने कहा कि ईश्वर मर गया है, तो उन्होंने कहा, उससे कहा किसने था कि वह जिंदा रहे? जब मुझे यह पता चला है कि आप में से बहुत से मित्रों को दुख पहुंचा है तो मुझे खुशी हुई। ईश्वर के मरने की बात से जिन्हें दुख पहुंचा है, उनका ईश्वर से कोई, न कोई लगाव है, कोई, न कोई प्रेम है। वे ईश्वर के संबंध में कुछ सोचते और विचार करते होंगे। अगर दुनिया में कुछ लोगों को इस बात से दुख होता रहा कि ईश्वर मर गया है तो शायद ईश्वर पुनरुज्जीवित हो सके।
लेकिन अगर लोगों ने उपेक्षा ग्रहण कर ली तो फिर ईश्वर के पुनरुज्जीवित होने की कोई संभावना नहीं है! नास्तिक कभी भी ईश्वर की हत्या नहीं कर सकता है, लेकिन जिनके मन में उपेक्षा है, इनडिफरेंस है, वे ईश्वर की हत्या कर सकते हैं। अगर सारी दुनिया उपेक्षा से भर जाए तो ईश्वर जिंदा भी रहे तो उसका क्या जिंदा होने का अर्थ होगा?
इसलिए मैं स्वागत करता हूं, अगर किसी को इस बात से दुख पहुंचा हो कि ईश्वर मर गया है। यह बड़ी खुशी की बात है। लेकिन इस दुख में कहीं ऐसा न हो कि हम मरे-मराए ईश्वर को, अपना दुख भुलाने के लिए पूजते चले जाएं। कहीं ऐसा न हो कि मरे-मराए ईश्वर के ही मंदिर में हम पूजा किए चले जाएं, क्योंकि हमें यह जान कर बहुत दुख होता है कि ईश्वर मर गया, इसलिए मानते चले जाएं कि अभी जिंदा है। यह खतरनाक बात होगी।
अगर ईश्वर मर गया है तो जो ईश्वर मर गया हो, जिन्हें दुख हो रहा हो, वे चाहे रोएं, चाहे आंसू बहाएं, लेकिन कृपा करें और उस ईश्वर को जाकर दफना दें। पिता मर जाते हैं, मां मर जाती है, तो हम क्या करते हैं? रोते हैं, लेकिन दफना आते हैं। मुर्दे को घर में रखना मरने से भी ज्यादा खतरनाक बात हो जाएगी। किसी का मर जाना उतना खतरनाक नहीं है, उसकी लाश को घर में रखे रहना बहुत खतरनाक है, क्योंकि जो जिंदा हैं उनके भी मरने की संभावना उससे पैदा हो जाती है।
ईश्वर तो मर गया है, लेकिन मनुष्य के मंदिरों में उसकी पूजा जारी है। इससे यह खतरा है कि कहीं मनुष्य भी न मर जाए, क्योंकि मुर्दे को घर में रखना बहुत खतरनाक है। यह तो मैंने कहा कि ईश्वर मर गया है, अब डर यह है कि कहीं आदमी भी न मर जाए। इसके पहले कि आदमी मरे, इस मरे हुए ईश्वर को दफना देना और जब तक इसे न दफनाया जाएगा, तब तक उस ईश्वर को नहीं पाया जा सकता है, जो कि न कभी जन्मता है और न कभी मरता है।
यह मनुष्य-निर्मित ईश्वर है, जो मरा है। यह मनुष्य-निर्मित धर्म हैं,
जो बनते हैं और मिट जाते हैं। ये मनुष्य-निर्मित ग्रंथ हैं, जो लिखे जाते हैं और भूल जाते हैं। यह मनुष्य-निर्मित मूर्तियां हैं, जो गढ़ी जाती हैं और बिखर जाती हैं। मनुष्य जो भी बनाएगा, वह शाश्वत नहीं हो सकता है। बनाया हुआ कुछ भी शाश्वत नहीं हो सकता है, क्योंकि जो बनाया गया है वह मिटने के बीज अपने में लिए होता है।

क्या आपका ईश्वर आपका बनाया हुआ है? अगर है, तो चाहे उसे कितना ही छाती
से संजो कर रखो, वह मरेगा। अगर आपका ईश्वर आपका बनाया हुआ नहीं है तो आप सब मिल कर कोशिश करो कि वह मर जाए तो भी नहीं मर पाएगा। लेकिन हमारा ईश्वर तो हमारा बनाया हुआ है। इसीलिए तो इतना कमजोर, इतना इंपोटेंट है, इतना नपुंसक है। कहते तो हम हैं कि ईश्वर है सर्वशक्तिमान। लेकिन उस सर्वशक्तिमान ईश्वर के मंदिर के बाहर भी एक सिपाही को बंदूक लेकर खड़ा कर देते हैं कि तुम इनकी रक्षा करो।
बड़े अदभुत सर्वशक्तिमान यह ईश्वर हैं, एक सिपाही इनकी रक्षा के लिए बाहर खड़ा है। यह हमारा बनाया हुआ ईश्वर है, जिसको सिपाही की जरूरत है। जिसको चोरी हो जाने का भय है, जिसे दुश्मनों के द्वारा फोड़े जाने का खतरा है। फिर यह ईश्वर बड़ा कमजोर है। हम इसके सामने प्रार्थनाएं भी करते रहते हैं। कोई प्रार्थना कभी नहीं सुनी जाती।
पिछले तीस साल से, चालीस साल से सारी मनुष्य-जाति प्रार्थना कर रही है, कि अब युद्ध न हो। लेकिन दो महायुद्ध हो गए और दो महायुद्धों में दस करोड़ लोगों की हत्या भी हो गई। एकाध आदमी के मरने की बात न सुने ईश्वर, लेकिन हर दस-पांच वर्षों में युद्ध हों और करोड़ों लोग मर जाएं और करोड़ों हृदय प्रार्थना करें, और न सुने, या तो ईश्वर बहरा है और या फिर जिस ईश्वर के सामने हम प्रार्थनाएं कर रहे हैं, वह जिंदा ही नहीं है। बहरा ईश्वर भी सुन लेता है। कितना हम चिल्लाते हैं, कितना रोते हैं, गिड़गिड़ाते हैं, लेकिन अब ईश्वर हो ही न, हम अपनी ही किसी कल्पित प्रतिमा के सामने खड़े होकर चिल्ला रहे हैं।
लेकिन अगर कोई वहम बहुत दिनों तक पोसा जाए तो हम भूल जाते हैं कि यह पागलपन है। घरों में छोटे-छोटे बच्चे गुड्डियों का विवाह रचाते हैं। हम हंसते हैं कि बच्चे हैं और हम रामचंद्र जी का विवाह रचाते हैं तो हम समझते हैं, हम धार्मिक हैं। उम्र बढ़ने से किसी का बचपन नहीं मिटता। उम्र बढ़ जाती है, बच्चे, बच्चे ही बने रहते हैं।
दो तरह के बच्चे होते हैंः छोटे बच्चे और बड़े बच्चे। बच्चे गुड्डे- गुड्डियों को कपड़े पहनाते हैं, मिठाइयां खिलाते हैं तो हम हंसते हैं कि बच्चे हैं, बड़े हो जाएंगे अपने आप छोड़ देंगे और हम रोज भगवान की मूर्ति को भोग लगाते हैं और न मालूम क्या-क्या पागलपन करते हैं और सोचते हैं कि हम धार्मिक हैं--इडियाटिक, मूढ़तापूर्ण हैं, जड़तापूर्ण हैं।
बच्चों को माफ किया जा सकता है, बूढ़ों को माफ नहीं किया जा सकता। बच्चे आखिर बच्चे हैं, लेकिन बूढ़े क्या हैं? और बच्चे तो गुड्डे-गुड्डी को थोड़ी देर खेलते हैं, फिर भूल भी जाते हैं, एक कोने में पटक देते हैं, अपना दूसरा काम करने लगते हैं।
लेकिन ये बड़े? जिन भगवान की गुड्डे-गुड्डियों जैसी मूर्तियां बना लेते हैं, मौका आ जाए तो तलवारें निकाल लेते हैं, हत्याएं कर देते हैं, लाखों लोगों को मार डालते हैं कि इनके भगवान को चोट पहुंच गई, इनके भगवान का अंग तोड़ दिया गया, इनके भगवान को गाली दे दी गई। खून करते हैं, हत्याएं करते हैं, आग लगाते हैं, न मालूम क्या-क्या करते हैं। क्या नहीं किया धार्मिक लोगों ने जमीन पर, इन पूजा करने वाले लोगों ने, मंदिर और मस्जिद बनाने वाले लोगों ने क्या नहीं किया है जमीन पर, जिसको पाप न कहा जा सके? सब तरह के पाप किए हैं। एक-एक आदमी ने अकेले-अकेले कोई बड़ा पाप नहीं किया है। लेकिन समूहों, संगठन और धर्म के नाम पर ऐसे पाप किए गए हैं कि उनको अगर ख्याल में भी ले आएं तो ऐसा प्रतीत होता है कि अगर यह दुनिया में इतने धर्म नहीं होते तो शायद दुनिया ज्यादा धार्मिक होती। इनसे इतना अधर्म आया है, जिसका कोई हिसाब नहीं।
लेकिन हम कहते हैं कि हम धार्मिक हैं। ऐसे लोग, जिनका मस्तिष्क बिल्कुल बचकाना है। यह हमारा बनाया हुआ भगवान किसी भी काम का साबित नहीं हुआ है, हो भी नहीं सकता। आदमी कमजोर है। जो आदमी भगवान बनाएगा वह उससे भी ज्यादा कमजोर होगा। स्रष्टा से उसकी सृष्टि कभी ज्यादा ताकत की नहीं हो सकती। मैं जो बनाऊंगा, वह मुझसे कमजोर होगा। आप जो बनाएंगे, वह आपसे कमजोर होगा। बनाने वाले से जो बनाई गई चीज है, वह बड़ी नहीं हो सकती, ताकतवर नहीं

हो सकती। यह भगवान तो हमारा बनाया हुआ है। यह हमसे ज्यादा ताकतवर नहीं हो सकता। इसकी सुरक्षा के लिए भी हमारी जरूरत पड़ती है और इसी के सामने हम हाथ जोड़ कर खड़े हैं, कैसा पागलपन है? खुद ही मूर्तियां गढ़ लेते हैं, उनको प्रतिष्ठा दे देते हैं, उनके सामने हाथ जोड़ कर खड़े हो जाते हैं। खुद ही प्रार्थनाएं बना लेते हैं, उनको करने लगते हैं।
यह भगवान मर गया है। न मरा हो तो मर जाना चाहिए। और जिनके मन में भी धर्म के प्रति थोड़ा प्रेम है, उन्हें इन भगवान के मर जाने में सहारा और सहयोग देना चाहिए। यह विदा हो जाए।
तो स्मरण रखिए, मनुष्य का मन भगवान से मुक्त नहीं हो सकता। लेकिन अगर झूठा भगवान विदा हो जाए तो एक खालीपन पैदा होगा, एक खालीपन पैदा होगा और उस खालीपन से एक प्यास पैदा होगी और हम भगवान की खोज में संलग्न होंगे। लेकिन यह जो सब्स्टीट्यूट गॉड है, यह जो पूरक भगवान है, यह प्यास को पैदा नहीं होने देता। प्यास को पैदा नहीं होने देता, यह पूर्ति कर देता है।
जैसे किसी आदमी को रुपयों की तलाश हो और हम नकली सिक्के उसके हाथ में
दे दें, वह निश्चिंत हो जाए और सो जाए। उसकी खोज बंद हो जाए। वह तिजोरी में ताला लगा दे और प्रसन्न घूमने लगे कि सिक्के मेरे पास आ गए, बात खत्म हो गई। अब वह सिक्कों की खोज भी बंद कर देगा। अब उसका अन्वेषण भी बंद हो जाएगा, अब उसका श्रम भी बंद हो जाएगा।
यह जो हमारे हाथ में एक परिपूरक भगवान हमें मिल गया है, इससे हमारी असली भगवान की खोज बंद हो गई।
एक रात दो साधु एक पहाड़ी स्थान से निकलते थे। वृद्ध साधु था, वह अपने कंधे पर एक झोला लटकाए हुए था। पीछे उसका युवा साधु, उसका शिष्य था, वह साथ में था। बार-बार वह वृद्ध साधु कहने लगा, जंगल, अंधेरी रात है। अपने शिष्य से पूछने लगा, यहां कोई खतरा तो नहीं है?
उसके शिष्य ने कहाः संन्यासी को और खतरा? रात अंधेरी हो तो हो, जंगल हो
तो हो, खतरा क्या है? लेकिन थोड़ी बहुत दूर चल कर वह वृद्ध साधु फिर पूछे, रात बड़ी अंधेरी है, अमावस है, रास्ता खतरनाक तो नहीं है कुछ? पूछा था किसी से? गांव में पता लगाया था?
उसे कुछ हैरानी हुई, इस भांति तो इस साधु ने कभी नहीं पूछा था। फिर वे
एक कुएं के पास ठहरे। उस साधु ने कहा कि मैं थोड़ा हाथ-मुंह धो लूं। झोला अपने युवक शिष्य को दिया, कहा--इसे सम्हाल कर रखना। साधु हाथ-मुंह धोने गया, उस युवक ने उस झोले के भीतर देखा, एक सोने की ईंट उस झोले में थी। उसे शक तो हो गया था कि साधु को खतरा है तो जरूर झोले में कुछ होना चाहिए, नहीं तो खतरा क्या होगा? उसने वह ईंट देखी। साधु अपने काम में लगा हुआ था। उसने ईंट तो फेंक दी एक गड्ढे में और एक पत्थर उठा कर उसके झोले में रख दिया। सब्स्टीट्यूट ईंट रख दी। एक पूरक ईंट रख दी। साधु हाथ-मुंह धोकर आया। उसने अपना झोला जल्दी से कंधे पर टांगा और देखा कि वजन है, मजे से चलने लगा। फिर थोड़ी देर चल कर उसने पूछा कि अब तो रात गहरी हो गई, क्या कोई गांव करीब नहीं है कि हम रुक जाएं? कोई खतरा तो नहीं है?
उस युवक ने कहा कि कोई खतरा नहीं है, बिल्कुल चले चलिए। साधु ने कई बार पूछा था, लेकिन इस युवक ने अब तक यह नहीं कहा था कि कोई खतरा नहीं। साधु को शक हुआ। उसने टटोल कर अपनी ईंट देखी। देखा कि ईंट अपनी जगह है। फिर उसने थोड़ी देर में पूछा कि मुझे बहुत भय लगता है।
उस युवक ने कहा, आप बिल्कुल निर्भय हो जाइए, आपके भय को मैं पीछे गड्ढे में फेंक आया हूं। उसने घबड़ा कर अपनी झोली खोली, देखी, तो वहां तो एक पत्थर की ईंट रखी हुई है। उसने कहाः निर्भय हो जाइए और मजे से चलिए, मैं भय को पीछे फेंक आया हूं। वह साधु बोलाः हद्द हो गई! हद्द हो गई! मैं तो इसी ईंट को सम्हाले हुए चला जा रहा था, मैं तो इसी ईंट को प्राणों से लगाए हुए चले जा रहा था। और अगर कोई हमला कर देता मुझ पर और इस ईंट को छीनने की कोशिश करता तो शायद खून-खराबी हो जाती, मैं अपनी जान दे देता, लेकिन इस ईंट को बचाता।
हमारा भगवान इसी तरह की ईंट हैं, जिसको आप सम्हाले चले जा रहे हैं और खून-खराबा किए दे रहे हैं और लड़े जा रहे हैं और मरे जा रहे हैं और झोली खोल

कर नहीं देखते, सोने की ईंट बहुत पहले विलीन हो गई है, पत्थर की ईंट आप ढो रहे थे। यह मर गया भगवान, यह मरे हुए भगवान को ढोते रहिए, ढोते रहिए, आपकी मर्जी!
कुछ लोगों को बोझ ढोना अच्छा लगता है, कोई क्या कर सकता है? लेकिन यह बहुत मंहगा पड़ रहा है। सारी मनुष्य-जाति मरी जा रही है, पत्थर के नीचे दबी जा रही है। थोड़ा देखिए खोल कर अपने इस भगवान को कि यह है क्या? इसे छोड़ना नहीं पड़ेगा। इसे खोल कर देखते ही आप निर्भय हो जाएंगे, यह पत्थर की ईंट है। भय विलीन हो जाएगा, फिर इसके मरने से दुख भी नहीं होगा। दुख इसलिए हो रहा है कि आप सोच रहे हैं कि ईंट सोने की न हो।
इसलिए अगर कोई आपको खबर दे दे कि वह ईंट खो गई तो आप प्रश्न पूछेंगे कि ईंट के खोने से हमें बड़ा दुख हो रहा है। लेकिन अगर आपको पता चल जाए कि ईंट पत्थर की है तो आप कहेंगे, ईंट उतर गई, कंधे के बोझ से तो हमें बहुत आराम मिल रहा है, बहुत सुख हो रहा है। मैं आपको कहता हूं, यह जो ईश्वर मर गया है, यह उनके हृदय के लिए खुशी का समाचार है, जिन्हें ईश्वर से कोई प्रेम है। इस संबंध में बहुत से प्रश्न पूछे हैं। वे करीब-करीब उस संबंध में मैंने तीन दिनों में बहुत सी बातें कही हैं। इसलिए उस संबंध में और ज्यादा कुछ कहना ठीक नहीं होगा।

कुछ मित्रों ने पूछा है कि कल मैंने कहा कि सेवा खतरनाक है। तो उन्होंने पूछा है कि क्या सेवा प्रेम नहीं है?

मैं कहना चाहूंगा, प्रेम तो सेवा है, लेकिन सेवा प्रेम नहीं है। फिर
से दोहराऊं, प्रेम तो सेवा है, लेकिन सेवा प्रेम नहीं है।
जहां प्रेम होता है, वहां तो सेवा अनिवार्यतया आ जाती है, लेकिन उसका पता नहीं चलता कि मैं सेवा कर रहा हूं। और अगर यह पता चलता हो कि मैं सेवा कर रहा हूं तो समझ लेना प्रेम नहीं है। सेवक को पूरे वक्त पता चलता है कि मैं सेवा कर रहा हूं। पता न चले तो वह करे ही नहीं सेवा। वह सेवा करने के लिए सेवा करता है। सेवा उसके लिए एक कर्त्तव्य है, एक ड्यूटी है। सेवा उसके लिए एक साधन है, जिसके द्वारा मोक्ष पाना है, ईश्वर पाना है, कुछ और पाना है।
प्रेमी सेवा करता नहीं है। सेवक सेवा करता है। प्रेमी सेवा करता नहीं, प्रेमी से सेवा होती है, निकलती है। जैसे फूल से सुगंध निकलती है, ऐसे प्रेम से सेवा निकलती है। और अगर प्रेमी से पूछो कि क्या तुम सेवा कर रहे हो तो वह कहेगा कैसी सेवा, मैं तो जानता नहीं हूं।
एक पहाड़ी पर एक छोटी सी लड़की--होगी कोई बारह-तेरह वर्ष की, अपने छोटे भाई को कंधे पर बांधे हुए पहाड़ चढ़ती थी। पीछे से एक संन्यासी भी आया और वह भी पहाड़ चढ़ रहा था।
वह लड़की तो जा रही थी अपने गांव, वह संन्यासी तीर्थ जा रहा था। पसीने
से तर-बतर थी लड़की। संन्यासी भी, संन्यासी अपना बिस्तर अपने कंधे पर लिए हुए था। लड़की अपने एक छोटे से भाई को कंधे पर बांधे हुई थी। जब वह करीब पहुंचा, भरी दोपहर, सूरज ऊपर आग बरसाए, पहाड़ की सीधी चढ़ाई, पसीने से तर-बतर, थकी-मांदी, श्वास चढ़ गई। उस ने उस लड़की के पास जाकर कहा कि बेटा, तुझे बहुत वजन लग रहा होगा?
उस लड़की ने उस संन्यासी की तरफ देखा और कहाः स्वामी जी वजन आप लिए हुए हैं। यह तो मेरा छोटा भाई है। उसने कहाः वजन आप लिए हुए हैं, यह तो मेरा छोटा भाई है।
तराजू पर तौलें तो संन्यासी के बिस्तर में भी वजन होगा और इसके छोटे भाई में भी। लेकिन हृदय के तराजू पर बिस्तर में वजन है और छोटे भाई में वजन नहीं है।
सेवा का वजन होता है। प्रेम का कोई वजन नहीं होता। इसलिए सेवा से अहंकार घनीभूत होता है। सेवक का अहंकार कि मैं सेवक हूं। हम सभी उससे परिचित होंगे, लेकिन प्रेमी का कोई अहंकार नहीं होता।

बड़े मजे की बात है। जितना सेवक सेवा करेगा, उतना ही अहंकार पुष्ट होगा
कि मैं कुछ हूं। और जो व्यक्ति प्रेम में जितना गहरा उतरेगा, वह पाएगा कि जितना अहंकार विलीन होता है, उतनी प्रेम में गहराई आती है।
प्रेम का फूल जब खिलता है तो अहंकार अनुपस्थित होता है, एब्सेंट होता
है और सेवा का चक्कर जब बहुत जोर से चलता है तो अहंकार घनीभूत होकर बीच में स्तंभ की भांति खड़ा हो जाता है।
इसलिए मैं कहता हूं, प्रेम तो सेवा है, लेकिन सेवा प्रेम नहीं है। और प्रेम एक हार्दिक संबंध है, सेवा, सेवा एक बौद्धिक संबंध है। सोच-विचार से संबंध है सेवा का, और इसलिए सेवा अपमानजनक है। जिसकी हम सेवा करते हैं, उसे निश्चित अपमान का अनुभव होता है।
प्रेम सम्मानजनक है। जिसे हम प्रेम देते हैं, वह गौरवान्वित अनुभव करता है। प्रेम जिसे हम देते हैं, वह गौरवान्वित होता है, क्यों? क्योंकि प्रेम देने वाले के पास कोई अहंकार नहीं होता। सेवा जब कोई हमारी करता है तो हमें संकोच लगता है। अपमान मालूम होता है। किसी से सेवा न लेना पड़े, ऐसा मालूम होता है, क्योंकि सेवा करने वाले का अहंकार सामने खड़ा होता है, वह मजबूत होता है।
सेवा तो धर्म नहीं है। यद्यपि धार्मिक व्यक्ति बहुत सेवा करता है। प्रेम जितना विकसित होता है, जीवन में सेवा के फूल अपने आप लगने शुरू होते हैं।
कोई यह कहे कि जब प्रेम से सेवा आ जाती है तो सेवा से प्रेम भी आ सकता है। तर्क में और गणित में तो ऐसा दिखाई पड़ता है, जैसे एक घर में अंधकार छाया हो और हम कहें कि अगर अंधकार को निकाल दें तो प्रकाश जल जाएगा, क्योंकि प्रकाश को जलाते हैं तो अंधकार निकल जाता है। तो तर्क तो बिल्कुल ठीक है। लॉजिक का जहां तक सवाल है, बिल्कुल ठीक है। प्रकाश को जलाते हैं तो अंधकार निकल जाता है तो अगर अंधकार को निकाल दें तो प्रकाश जल जाएगा। तो तर्क तो बिल्कुल ठीक है, लेकिन ऐसा होगा नहीं। जीवन में ऐसा नहीं होगा। प्रकाश जलाएंगे तो अंधकार तो निकल जाएगा, अंधकार निकालने गए तो खुद समाप्त हो जाएंगे। अंधकार को कभी निकाल ही नहीं सकेंगे। प्रकाश के जलने का तो सवाल ही नहीं है। तो ऐसा तो होगा कि प्रकाश जल जाए, अंधकार निकल जाए। लेकिन ऐसा कभी ना होगा कि अंधकार को आप निकाल दें और प्रकाश जल जाए। अंधकार निकाला नहीं जा सकता।
तो मेरा कहना है प्रेम का दीया जल जाए तो वह सारे तत्व जीवन से विलीन
हो जाते हैं, जिनके कारण सेवा के खिलने में, फैलने में बाधा है। अगर प्रेम का तत्व उपलब्ध हो जाए तो सेवा के मार्ग के सारे अवरोध, सारे पत्थर हट जाते हैं। सेवा प्रवाहित होने लगती है। लेकिन कोई चाहे कि हम सेवा को प्रवाहित कर दें और इससे प्रेम का जन्म हो जाए, यह वैसे ही गलत है कि कोई सोचे कि हम अंधेरे को बाहर निकाल दें और घर का दीया जल जाए। कभी नहीं जलेगा।
लेकिन यह भूल बहुत पुरानी है और मनुष्य-जाति ने जिन भूलों के कारण कष्ट उठाया है, उन बुनियादी दो-चार भूलों में से एक है। हम सभी को यह ख्याल है। जिस आदमी को ख्याल पैदा होता है कि मेरे मन में प्रेम होना चाहिए, वह सोचता है, घृणा को निकाल कर बाहर कर दूं तो प्रेम आ जाएगा, यह गलत बात है। जिस आदमी के मन में ख्याल आता है कि मेरे भीतर क्षमा होनी चाहिए तो वह सोचता है, क्रोध को निकाल कर बाहर कर दूं तो क्षमा आ जाएगी।
जिस आदमी को ख्याल होता है कि मेरे भीतर ब्रह्मचर्य आ जाए। वह सोचता है, सेक्स को निकाल कर बाहर दूं तो ब्रह्मचर्य आ जाएगा। ये एक ही श्रेणी की भूलें हैं। वही, अंधकार को निकाल दूं तो प्रकाश आ जाएगा। यह बिल्कुल ही एब्सर्ड, एकदम गलत, एकदम गणित ही गलत है। यह कभी हो ही नहीं सकता।
यही तो वजह है कि ब्रह्मचर्य लाने वाला, सेक्स को निकालते-निकालते सेक्स में ही डूबता चला जाता है। और ब्रह्मचर्य कभी नहीं आता। और क्रोध को निकालने वाला क्रोध को निकाल-निकाल कर और क्रोधी होता चला जाता है और कभी क्षमा नहीं आती।
एक क्रोधी सज्जन एक गांव में निवास करते थे। जैसा कि सभी गांव में सभी सज्जन निवास करते हैं। वह सज्जन भी उस गांव में निवास करते थे। बहुत

क्रोधी थे। छोटी-छोटी बात पर, छोटी-छोटी बात पर क्रोध उनके भीतर जल जाता था। आग लग जाती थी। छोटी-छोटी बात पर बबूला हो उठते थे। पत्नी की हत्या कर दी क्रोध में आकर। एक बच्चे को उठा कर कुएं में फेंक दिया। गांव घबड़ा गया। गांव में एक संन्यासी आए, एक मुनि आए तो गांव के लोगों ने कहा कि यह परम क्रोधी है हमारे गांव में। इनको कोई ठीक करने का उपाय नहीं? उस संन्यासी ने कहाः इसमें क्या कठिनाई है। क्रोध को छोड़ दो। बिल्कुल सरल सी तरकीब बताई जैसा कि सभी संन्यासी बताते हैं। क्रोध को छोड़ दो, बात खत्म हो गई! जैसे कोई बीमार हो और कहे कि मैं बहुत बीमार हूं और डाक्टर आए--इसमें क्या गड़बड़ है, बीमारी छोड़ दो बात खत्म हो जाएगी! नुस्खा बहुत आसान है, मरीज सिर पकड़े बैठा रहेगा कि यह कहते तो आप ठीक हैं कि हम बीमारी छोड़ दें। कभी किसी ने बीमारी छोड़ी है? नहीं, आज तक दुनिया में कोई बीमारी नहीं छोड़ सका। हां! स्वास्थ्य पैदा किया जाता है तो बीमारी छूट जाती है।
स्वास्थ्य, पाजिटिव हैल्थ, बीमारी तो निगेटिव है, नकारात्मक है।
बीमारी छोड़ी नहीं जा सकती। स्वास्थ्य पैदा किया जाए तो स्वास्थ्य पैदा करने की कोशिश की जाए तो बीमारी नष्ट होती है। अपने आप विलीन हो जाती है।
लेकिन उन संन्यासी ने कहाः क्रोध को छोड़ दो। वह आदमी तो पक्का क्रोधी था।
उसने कहा कि मैं कसम खाता हूं कि क्रोध को छोड़ कर रहूंगा।
क्रोधी आदमी ऐसी कसम अक्सर खा लेते हैं, क्रोध में। हालांकि उन्हें पता नहीं कि यह क्रोध का हिस्सा है। यह जो कसम कि मैं क्रोध छोड़ कर रहूंगा, चाहे जान रहे कि जाए, उसने कहा। बातें वह वही की वही बोल रहा था जो कल तक बोलता था। किसी से झगड़ा हो जाता था तो वह कहता था कि मेरी जान रहे कि तुम्हारी।
संन्यासी ने कहाः क्रोध को छोड़ दो, बिल्कुल सरल बात है। वह खड़ा हो गया
और उसने कहा कि मैं क्रोध छोड़ कर रहूंगा, चाहे जान रहे कि जाए। यह वही का वही क्रोध था। इसमें कोई फर्क थोड़े ही था? लेकिन संन्यासी भी खुश हुए कि यह तो बड़ा संकल्पवान आदमी है। ऐसे मूढ़ अक्सर संकल्पवान समझ लिए जाते हैं। कि यह बड़ा विल-पॉवर का आदमी है। संन्यासी ने कहा कि अगर तूने ऐसा संकल्प ही कर लिया है तो संन्यासी हो जा। वह आदमी संन्यासी हो गया। क्रोधी आदमी कुछ भी कर सकता है। संन्यासी भी हो सकता है। क्रोधी आदमी से कुछ भी हो सकता है। जो हत्या कर सकता है अपनी पत्नी की, वह संन्यासी नहीं हो सकता? यह तो बिल्कुल आसान बात है।
उसने कपड़े-लत्ते वहीं उतार कर फेंक दिए। वह गया, बाजार से कपड़े रंगा
कर आ गया और संन्यासी हो गया। जैसा कि किसी को भी संन्यासी होना हो, कपड़ा बदल दे, रंग ले और संन्यासी हो जाए। वह भी हो गया। गांव के लोगों ने कहा कि है तो परम-तपस्वी मालूम होता है! कितनी शीघ्रता से कितने संकल्प से परिवर्तन हो गया। बुद्धिमान आदमी में परिवर्तन धीरे-धीरे होता है, मूढ़ आदमियों में एकदम से भी हो जाता है। उस मुनि ने कहा कि ठीक। मैंने बहुत लोग देखे, लेकिन तेरे जैसा खोजी मैंने नहीं देखा कि एक-दो मिनट के भीतर तुझमें परिवर्तन हो गया। उस संन्यासी को उन्होंने कहा कि हम तेरा नाम मुनि शांतिनाथ रख देते हैं। तू तो शांति का अवतार मालूम होता है। इतनी शीघ्रता से! मुनि शांतिनाथ जो अभी ढीले से बैठे थे, वह और अकड़ कर सीधे हो गए, उन्होंने रीढ़ ऊंची कर ली। लोगों ने कहा कि मुनि शांतिनाथ! वह, जो कि परम क्रोधी था, बिल्कुल आंख बंद करके शांत होकर बैठने लगा।
क्रोध ऐसे कहीं विलीन तो हो नहीं जाएगा। वह भीतर-भीतर घूमता है। पहले निकल जाता था तो थोड़े-बहुत छुटकारा भी होता था। अब वह भी न रहा। अब कोई निकास का कोई द्वार न रहा। कोई एक्झिट, कोई भी नहीं।
अब वह भीतर-भीतर उसका क्रोध घूमने लगा। क्रोध में वह बड़ी तेजी से भाषण करने लगा। क्रोध में कोई भी तेजी से भाषण कर सकता है। क्रोध में वह बड़ी ऊंची सिद्धांतों की बातें बोलने लगा, खंडन-मंडन करने लगा, शास्त्रार्थ करने लगा। क्रोधी कुछ भी कर सकता है और यह सब क्रोध के लक्षण हैं।
दस साल बीत गए। वह क्रोधी व्यक्ति जो कि मुनि शांतिनाथ हो गए थे, बहुत प्रसिद्ध हो गए। प्रसिद्धि के लिए जो भी गुण चाहिए, सभी उन्हीं में थे। कोई उनमें कमी न थी। नेता होने के लिए, गुरु होने के लिए, क्रोध होना बहुत

जरूरी है। नहीं तो कोई हो नहीं सकता। वह एक बड़ी राजधानी में आए। वहां उनके बचपन के साथी एक मित्र रहते थे। उन्हें तो हैरानी थी कि उनका वह परम क्रोधी मित्र और संन्यासी हो गया और सुनते हैं मुनि शांतिनाथ कहलाने लगा। अब तक तो उन्होंने लंगोटी और कपड़े भी छोड़ दिए थे। अब वह नग्न ही रहने लगे थे। जब क्रोधी आदमी कोई काम करता है तो एक्सट्रीम तक करता है। बीच में कभी नहीं रुकता। उन्होंने लंगोटी-वंगोटी सब छोड़ दी थी। अब वह बिल्कुल नग्न, परम दिगंबर हो गए थे। तो वह मित्र उनका मिलने गया। मित्र तो उनको पहचान गया, लेकिन जो दस साल तक संन्यासी रह चुके थे, अब वह किसी मित्र को पहचान सकते थे? संन्यासी का कोई मित्र होता ही नहीं। संन्यासी का तो कोई लाग-लगाव होता है?
तो यद्यपि पहचान तो गया वह, लेकिन वह कुछ बोला नहीं, क्योंकि मित्रता दिखानी एक सामान्य आदमी से अशोभन है। बड़े आदमी, छोटे आदमियों से कोई मित्रता कभी नहीं रखते। उनके आप शिष्य हो सकते हैं, वे आपके गुरु हो सकते हैं। मित्र आप उनके कभी नहीं हो सकते।
तो वह बड़ा आदमी हो गया था। महान त्यागी था। मित्र बैठे हुए थे तो उनकी तरफ देख भी नहीं रहा था। तो इन्होंने उनसे पूछा कि क्या महानुभाव? उसके हिसाब से मित्र पहचान तो गया कि मुझे पहचान लिया है। बार-बार किनारे की आंख से वह देख लेता था, लेकिन पहचानना नहीं चाहता है।
जब कोई आदमी बड़ा आदमी हो जाता है, तो छोटे आदमियों को सड़क पर पहचानना पसंद नहीं करता, क्योंकि उनके पहचान से यह पता चलता है कि तुम भी कभी छोटे थे, जब इनसे दोस्ती रही होगी, कोई नहीं पहचानता। कोई बड़ा आदमी कभी छोटे आदमियों को नहीं पहचानता है। वह भी नहीं पहचाना तो इसमें कोई कसूर की बात तो नहीं है। इसमें उस पर नाराज होने की कोई जरूरत भी नहीं है। मित्र ने पूछा कि क्या महानुभाव! मैं पूछ सकता हूं कि आपका नाम क्या है? उसने कहाः मेरा नाम? क्या अखबार नहीं पढ़ते हो? आंखें बंद करके जिंदा रहते हो? सारी दुनिया मेरा नाम ले रही है--मुनि शांतिनाथ!
मित्र समझ तो गया कि आदमी वहीं के वहीं हैं, कहीं गया नहीं। थोड़ी देर संन्यासी कुछ ब्रह्मचर्चा करते रहे। आत्मज्ञान की बातें, उपनिषद की बातें बताते रहे। फिर उस मित्र ने पूछा, क्या महानुभाव! मैं पूछ सकता हूं आपका नाम क्या है? उन्होंने बड़े गुस्से से उसे देखा और बोले, हद हो गई। मैंने अभी तेरे को बताया है कि मेरा नाम मुनि शांतिनाथ है। भूल गया इतनी जल्दी?
बात आई-गई, फिर ब्रह्मचर्चा चलने लगी। कोई दो मिनट बीते होंगे! उस मित्र ने फिर पूछाः क्या महानुभाव! मैं पूछ सकता हूं आपका नाम क्या है? उन्होंने डंडा उठा लिया। उन्होंने कहाः कह दिया कि मेरा नाम मुनि शांतिनाथ है। अगर अबकी दफा पूछा तो वह मजा चखाऊंगा कि जीवन भर याद रहेगा। उस मित्र ने कहाः मैं पहचान गया कि आप वही शांतिनाथ हैं जो अपने बचपन में साथ में रहे और कोई फर्क नहीं हुआ है। इसी बात को पूछने के लिए तीन दफा मुझे नाम पूछ कर आपको कष्ट देना पड़ा।
क्रोध वहीं का वहीं है। ऐसे कहीं कोई क्रोध नहीं छूटता है, सो साधु- संन्यासी अभिशाप देते रहे, शाप देते रहे, काहे के लिए! ऋषि-मुनि अभिशाप देते रहे कि जाओ कई जन्मों तक भटको, नरक में जाओ, यह हो जाए। कैसे लोग रहे होंगे? इनको ऋषि-मुनि कौन कहता रहा होगा? ये परम क्रोधी लोग रहे होंगे। क्रोध से ही इनका संन्यास निकला होगा। वह क्रोध भीतर मजबूत रहा होगा। छोटी-छोटी बात पर अभिशाप! ऋषि से और अभिशाप? मुनि से और अभिशाप? यह तो अकल्पनीय है। इनकी तो कोई कल्पना भी नहीं हो सकती। लेकिन सारी कथाएं, सारे पुराण भरे हैं।
क्रोध ऐसे नहीं जाता, नहीं जा सकता। जीवन में कोई भी निषेधात्मक, कोई
भी निगेटिव इमोशन कभी सीधा नहीं हटाया जा सकता। घृणा नहीं छोड़ी जा सकती, क्रोध नहीं छोड़ा जा सकता। हां प्रेम जगाया जा सकता है। और प्रेम जग जाए तो क्रोध विलीन हो जाता है, घृणा छूट जाती है। यह वैसे ही है जैसे दीया जल जाए, अंधकार चला जाता है।

इसलिए मैं नहीं कहता कि क्रोध छोड़ो। मैं नहीं कहता कि घृणा छोड़ो। मैं नहीं कहता हूं कठोरता छोड़ो। मैं नहीं कहता हूं सेक्स, काम छोड़ो। मैं नहीं कहता हूं लोभ छोड़ो। छोड़ने की भाषा गलत है। मैं कहता हूं, प्रेम को उपलब्ध करो, प्रकाश को उपलब्ध करो। उसकी उपलब्धि, इनका छोड़ना अपने आप बन जाएगी। उसे पा लेना इनका छूट जाना है।
इसलिए जो धर्म छोड़ना सिखाता है, वह धर्म ही नहीं। जो धर्म पाना सिखाता है, उपलब्ध करना, पाजिटिव, विधायक रूप से कुछ होना सिखाता है, वही सच्चा है। निषेधात्मक धर्म का ईश्वर मर गया, जो कहता था, क्रोध छोड़ो, हिंसा छोड़ो। विधायक धर्म के ईश्वर को जन्म देने का इरादा है क्या? जो कहे कि प्रेम
को फैलाओ, प्रेम को विकसित करो, प्रकाश को जगाओ। अगर संसार में कभी भी कोई धर्म का राज्य होगा तो वह विधायक खोज से होगा, निषेधात्मक निषेध से नहीं। इसलिए मैं कहता हूं, धर्म त्याग नहीं है, धर्म है उपलब्धि। धर्म छोड़ना नहीं है, धर्म है पाना। धर्म संसार का विरोध नहीं है, धर्म है ईश्वर को पा लेना। यह जो विरोध की भाषा है छोड़ने की, त्यागने की, गलत है। इसलिए मैंने कहाः प्रेम तो सेवा है, सेवा प्रेम नहीं।
अंत में बहुत से ऐसे प्रश्न हैं, जिनमें कोई तारतम्य और कोई संगति नहीं है। जैसे कोई पूछता है ईश्वर कहां रहता है?
ठीक है। जब उन्होंने सोचा कि मैंने खबर कर दी कि ईश्वर मर गया है, तो इतना तो पता ही होगा कि रेसीडेंस कहां है, रहते कहां हैं यह सज्जन?
तो पूछना उनका स्वाभाविक है कि ईश्वर कहां रहता है? कितने हाथ-पैर हैं, कैसा मुंह हैं, क्या शक्ल है? अगर आपने देखा है तो क्या उनका रूप बतला सकते हैं? स्वर्ग और नरक है या नहीं? है तो उनके बीच फासला क्या है? क्या कोई नरक से स्वर्ग जा सकता है?
दुनिया में जनसंख्या आदमी की बढ़ती जा रही है और कहते हैं आत्माएं सीमित हैं। तो यह कैसे बढ़ती जा रही हैं? ऐसे बहुत-बहुत प्रश्न हैं, अनेक-अनेक प्रकार के।
तो जब ऐसे बहुत से प्रश्न मेरे पास होते हैं तो उस दिन मैं एक सपना जरूर देखता हूं। आज मैंने वह सपना देखा। उसी सपने को मैं आपसे कहूंगा। जब भी ऐसे बहुत से प्रश्न मेरे पास होते हैं तो उस दिन मैं एक सपना जरूर ही देखता हूं। आज ही दोपहर मैंने एक सपना देखा। उस सपने को ही आप से कहूंगा। अब प्रश्नों के उत्तर नहीं दूंगा। हो सकता है उस सपने में इन प्रश्नों में से बहुतों के उत्तर मिल जाएं और बहुत से प्रश्न, जिनका मैं उल्लेख भी नहीं कर रहा हूं, उनके भी उत्तर मिल जाएं। और यह भी हो सकता है, कोई भी उत्तर न मिले। सपने का क्या भरोसा?
दोपहर में सोया और मैंने एक सपना देखा कि मैं एक बहुत टूटे-फूटे से मकान के सामने खड़ा हूं। उसके सामने ही एक बहुत बड़ी हवेली है। सिर उठा कर देखता हूं तो उस हवेली के ऊपर का आखिरी हिस्सा दिखाई नहीं पड़ता। वह आकाश में कहीं दूर उठती ही चला जाती है और उसके ही सामने एक टूटे-फूटे फाटक पर उसके पीछे एक छोटा सा झोपड़ा है।
सोचा कि यह क्या है? लेकिन स्वाभाविक है। जहां बहुत बड़े मकान होते हैं, उनके सामने छोटे झोपड़े होने जरूरी हैं, नहीं तो बड़े मकान होंगे कैसे? छोटे मकानों को और छोटा करके ही तो बड़ा मकान और बड़ा होता है।
तो एक मकान बड़ा होता चला गया है, दूसरा मकान छोटा होता चला गया है। धीरे-धीरे एक मकान आकाश छू लेगा, दूसरा मकान जमीन पर बिछ जाएगा और सो जाएगा। ठीक है! किसका मकान है तो मैंने देखा, वह जो टूटा सा झोपड़ा है, उसके सामने एक तख्ती लगी है। वर्षा में शायद उसके रंग उड़ गए हैं। शायद बहुत दिन से कोई पुताई नहीं हुई। उस पर लिखा हुआ हैः श्री भगवान।
बहुत घबड़ाया। भगवान का मकान? दिखता है किसी शराबी ने होली का वक्त करीब आता है तख्ती बदल दी है। भगवान का मकान यह होना चाहिए? भगवान जो कि परम शक्तिशाली, परमपिता, सबके बनाने वाले, वह कोई झोपड़े में रहेंगे, इस झोपड़े में?

लेकिन सामने जो तख्ती लगी है, वह तो लगी है। इधर तो लिखा हैः श्री भगवान। बिल्कुल हिंदी में लिखा है और वह भी एड़े-टेढ़े अक्षरों में। उधर लिखा है डाक्टर डेविल डी. डी. डाक्टर ऑफ डिग्निटी और डाक्टर डेविल।
शैतान का घर है यह। और इनको डी. डी. किसने दे दी है--यह डाक्टर ऑफ डिग्निटी कब हो गए? यह धर्माचारी कब हो गया है? डेविल, जो है यह शैतान! तख्ती में कोई गड़बड़ है और यह श्री भगवान की तख्ती बहुत दिन से पुती भी नहीं है और सन्नाटा है और इधर कोई दिखाई भी नहीं पड़ता, फिर भी मैंने कहा कि जब पूछना ही है तो बजाय शैतान के घर में जाने के भगवान के घर में जाकर पूछना ठीक है।
मैंने वह फटकी खोला, उसपर इतनी धूल जमी है, जिससे पता चलता है कि इस पर कभी कोई आता ही नहीं। अंदर घुसा तो एक बहुत बड़े कुत्ते को उस झोपड़े के बाहर बैठा देखा तो मैं थोड़ा डरा, क्योंकि कुत्ते कई प्रकार के होते हैं, जैसे आदमी कई प्रकार के होते हैं। पता नहीं किस प्रकार का कुत्ता हो?
एक तो वह कुत्ता होता है, बिल्कुल मरियल। उसकी जाति अलग होती और उसको पहचानने का एक ढंग होता है। बच्चे अगर घर में मिठाई भी खा रहे हों और बाहर मरियल कुत्ता आ जाए तो मिठाई खाना छोड़ कर फौरन पत्थर उठाकर उसके पीछे भागते हैं।
मरियल कुत्ते में कुछ मैगनेटिक फोर्स होती है, कोई जादू होता है कि बच्चे एकदम भागते हैं और पत्थर उठा लेते हैं, चाहे लाख मिठाई खा रहे हों, गुड्डी से खेल रहे हों या कुछ भी कर रहे हों। मरियल कुत्ता बाहर निकलता है तो बच्चे भाग कर निकल आते हैं, पत्थर उठा लेते हैं। एक तो कुत्ता मरियल होता है। मरियल कुत्ता हमेशा कानून से चलता है। जैसे सड़क पर लिखा रहता है, बाएं चलो, तो वह हमेशा बाएं चलता है, वह गरीब का कुत्ता। उसको नियम पालन करना पड़ता है, नहीं तो पुलिस वाला कहेगा चलो, रस्ते से बाएं चलो।
एक अलसेसियन डॉग होता है। वह सड़क के बीच में चलता। वह कभी बाएं नहीं चलता है, क्योंकि पुलिसवाला उसको नमस्कार करता है, वह बड़े साहब का कुत्ता है। और अलसेसियन कुत्ता जब निकलता है, तो बच्चा चाहे घर के बाहर गिल्ली- डंडा खेलता हो, वह फौरन भाग कर दरवाजा बंद करता है और होमवर्क करने लगता है। उसको पत्थर नहीं मारता।
ऐसे कुत्ते कई तरह के होते हैं, लेकिन दो तो खास जातियां हैं। तो मैंने कहा पता नहीं यह मरियल कुत्ता है कि अलसेसियन कुत्ता है। इसके पास जाना उचित है कि नहीं। और फिर भी जाना तो था तो मैं धीरे-धीरे बढ़ा।
बढ़ने पर बड़ी हैरानी हुई। करीब जाने पर देखा तो कुत्ता बिल्कुल आंखें बंद किए हुए सोया है। तो मैंने सोचा श्री भगवान का कुत्ता है। शायद कोई योग-साधना करता हो। सत्संग से तो पत्थर तक जीवित हो गए हैं। यह तो कुत्ता है। तो सत्संग के प्रभाव से मालूम होता है आंख बंद कर ली। जैसा कि सुनते हैं ऋषि-मुनियों के घर के तोते भी वेद-मंत्र पढ़ते थे। ऐसे ही दिखता है, यह कुत्ता भी कोई ध्यान वगैरह कर रहा है! कोई समाधि लगा रहा है! क्या कर रहा है?
पर मैंने कहा फिर भी सम्हल कर जाना चाहिए, क्योंकि कई समाधि बगुले जैसी समाधि होती है। बगुला समाधि लगा कर रहता है और मछली को ताकता भी रहता है। पास गए और कुत्ता कहीं धोखा दे दे और टूट पड़े और समाधि झूठी निकले तो मुश्किल हो जाए। जैसा कि अक्सर समाधियां झूठी निकलती हैं। पास जाओ टूट जाती हैं। दूर से समाधि मालूम पड़ती है, पास जाकर पता चलता है, समाधि नहीं थी, धोखा था।
तो मैंने कहा पता नहीं किस प्रकार का योगी है। बगुला योगी है कि सचमुच योगी है, कुछ कहा नहीं जा सकता। फिर भी पास जाना जरूरी था। पास जाकर, कितना ही पास चला गया, लेकिन वह तो परम ध्यान में है। वह हिलता-डुलता नहीं।
तो मैंने कहा कि चमत्कार है! एक कुत्ता भी देखो, आदमी को छोड़ो, एक कुत्ता भी भाव-दशा को उपलब्ध हो गया है। पता नहीं ब्रह्मलीन है इस समय या क्या कर रहा है? कहां है? स्वभावतः मैंने हाथ जोड़े और उसको नमस्कार कर ही रहा था तब मुझे एक ख्याल आया कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि कुत्ता मर गया हो और हम सोचते हों कि ब्रह्मलीन है। उसपर कंकड़ मार कर देखा तो पता चला कुत्ता

तो मरा हुआ है। और जब मैं उसको हाथ जोड़ता था तभी एक बूढ़ा आदमी बाहर निकला और उसने कहाः क्या करते हैं? तो मैंने कहा कि मुझे प्रतीत होता है कि यह जीव ब्रह्मज्ञान की स्थिति में है। इसको नमस्कार करता हूं। तो उन्होंने कहा कि नहीं यह कुत्ता ब्रह्मज्ञान की स्थिति में नहीं है, ब्रह्मलोक सिधार चुका है। इसने ब्रह्मलोक उपलब्ध कर लिया है। यह बड़ा अदभुत कुत्ता था। यह बड़ा साधक था, यह बड़ा योगी था। इसने सब तरह के योग साधे और आखिर यह परमगति को प्राप्त हो गया।
तो मैंने कहा कि क्या श्री भगवान यहीं रहते हैं? उन्होंने कहा कि मालूम होता है आप कुछ भी नहीं जानते हैं। मैं ही श्री भगवान हूं। वह बूढ़ा आदमी बोला। उस बूढ़े आदमी को देख कर मुझे भी बड़ी घबड़ाहट हुई, क्योंकि कभी कल्पना नहीं की थी कि ऐसे श्री भगवान होंगे। उनके कपड़े भी फटे हुए थे।
उनकी हालत बड़ी खराब थी। चश्मा उनका टूटा हुआ था। एक रस्सी बांधे हुए थे। तो मैंने कहा, मुझे विश्वास नहीं आता। और फिर मेरा विश्वास में विश्वास भी नहीं है। मुझे शक होता है।
उन्होंने कहाः देखो विश्वास फलदायी होता है। शक करोगे भटक जाओगे। संदेह जिन्होंने किया है, गए नरक में। मैं जो कहता हूं मानो। तब मुझे भी डर हुआ और मैंने सोचा कि ठीक ही कहते हैं, भगवान कई रूपों में प्रकट होते हैं, कई दफा कछुए के रूप में प्रकट हो जाते हैं, तो हो सकता है कि इस बार उन्होंने यही बूढ़े का रूप प्रकट किया हो? किस भेष में मिल जाएं, कुछ पता भी नहीं है। तो क्यों झंझट करनी, मैंने जल्दी से झुक कर नमस्कार किया। वे बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा कि आओ, अंदर आ जाओ।
भीतर मैं गया तो मैं बहुत हैरान हुआ। मैंने देखा कि वहां तो कुछ भी नहीं था। कोई फर्नीचर भी नहीं था, कोई सामान भी नहीं था। हम तो सुनते थे बड़े सिंहासन पर भगवान बैठते हैं। वहां कुछ भी नहीं था। एक फटी सी चटाई पर बैठे हुए थे और क्या कर रहे थे! उसे देख कर और हैरानी हुई। हम तो सोचते थे शायद दुनिया को बनाने की, बदलने की, गरीबों की, इसकी, उसकी योजना करते होंगे। नये-नये प्राणी बनाते होंगे! वे एक स्लेट-पट्टी लिए, कुछ किताबें रखे हुए, सी ए टी कैट, कैट यानि बिल्ली, यह पढ़ रहे थे। आर ए टी रैट, रैट यानी चूहा!
मैं बहुत हैरान हुआ कि यह कैसे भगवान हैं? मैंने उनसे पूछाः क्या यह
कर रहे हैं आप?
वे बोले कि मैं संस्कृत के चक्कर में पड़े-पड़े बर्बाद हो गया, अब अंग्रेजी सीख रहा हूं। वह सामने जो शैतान रहता है, अंग्रेजी उसने पहले सीख ली और मैं इसी भूल-भुलक्कड़ में पड़ा रहा कि संस्कृत देव-भाषा है, भटक गया। उसने सब जिंदगी, दुनिया जीत ली उसने, अंतर्राष्ट्रीय भाषा सीख गया। हम संस्कृत के पीछे पड़े रहे।
अभी-अभी किसी ने कहा कि तुम पिछड़ते ही जा रहे हो, पिछड़ते ही जा रहे हो। अंतर्राष्ट्रीय भाषा सीखो तो मैं अंग्रेजी सीख रहा हूं। वह जल्दी से अपनी किताब उठाकर बैठ गए और पढ़ने लगे सी ए टी कैट, कैट यानी बिल्ली। आर ए टी रैट, रैट यानी चूहा।
मुझे तो इतनी घबड़ाहट होने लगी कि यह क्या हो रहा है। यह कैसे भगवान हैं! मैंने उन्हें पूछाः हद्द कर दी, इस उम्र में अंग्रेजी सीख रहे हो? तो उसने कहाः उम्र का क्या सवाल है? उम्र का सवाल होता है तुम्हारी दुनिया में, जहां आदमी मरते हैं। यहां मुसीबत है कि कोई मरता ही नहीं। उम्र का कोई सवाल ही नहीं है यहां, तुम्हारी दुनिया में लोग चिल्लाते हैं कि हे भगवान! हमें अमर कर दो और हम यहां अपनी छाती पर हाथ रख कर रोते हैं कि कोई मरने का कोई उपाय मिल जाए तो ठीक है। कितने-कितने दिन से बैठे हैं, बैठे हैं? कुछ रस्ता ही नहीं मिलता, कोई मरने का उपाय ही नहीं है।
अमरता बड़ी खतरनाक है, क्योंकि कभी नहीं मर सकेंगे। इससे ऐसी घबड़ाहट होती है कि यही बोझ रोज, यही बोझ, यही बोर्डम। यही सुबह से लोगों की प्रार्थनाएं, पतित-पावन चिल्ला रहे हैं दुनिया भर के लोग, हम सुन रहे हैं बैठे। कोई रघुपति राघव राजा राम कर रहा है, कोई कुछ कर रहा है। हम इसको सुन रहे हैं। हमारा दिमाग खराब हो गया है।

इधर पीछे तो एक आदमी आ गया था, उसने सलाह दी कि तुम अपने कान में यंत्र लगवा लो तो हमने कान में यंत्र बनवा लिया है। जिसकी सुननी होती है, यंत्र लगा लेते हैं; नहीं सुननी होती है, यंत्र बाहर निकाल लेते हैं। तो जो बहुत अपने वाले हैं, उनकी सुन भी लेते हैं। जो नहीं हैं, उनकी नहीं भी सुनते। मुझे तो बहुत घबड़ाहट हुई। मैंने तो सोचा यह ढंग दुनिया में चलता है, यहां भी चलता है। और बोले कि मैं अंग्रेजी सीख रहा हूं। जल्दी आशा है कि सीख लेंगे, तो शायद शैतान के मुकाबले कोई जीत भी हो जाए। देखते हैं शैतान मकान पर मकान बनाता जा रहा है। यहां जमीन उखड़ती जा रही है। मैंने उनसे पूछा, लेकिन आपके ऋषि-मुनि कहां हैं, जो हजारों-हजारों हो गए और यहां स्वर्ग में आ चुके हैं। यह स्वर्ग है न? उन्होंने कहाः हां यह स्वर्ग है। और मैंने कहाः वह सामने? उन्होंने कहाः वह नरक है। हम तो सुने थे कि नरक में आग की लपटें जलती हैं, और वहां तो बढ़िया रास्ते बने हुए हैं। बढ़िया मकान और बगीचे लगे हुए हैं। भगवान ने कहाः वह सब शैतान की करतूत है। उन्होंने सब गड़बड़ कर डाला है। और यहां? हमने कहाः कहां है कल्पवृक्ष... वगैरह? उन्होंने कहाः अब कहां? नदी पर उन लोगों ने बांध बांध लिया है। पानी इस तरफ आने नहीं देते नरक से। सारे वैज्ञानिक वहां इकट्ठे हो गए हैं, वे बादलों को नहीं आने देते इस तरफ। सारे राजनीतिज्ञ वहां इकट्ठे हो गए हैं। वह रोज एन्क्रोचमेंट किए चले जाते हैं। जमीन स्वर्ग की हड़पते चले जाते हैं। हमको पीछे हटना पड़ रहा है। हम अकेले रह गए हैं।
ऐसे सौ, दौ सौ थोड़े-बहुत लोग हैं। बुद्ध हैं, महावीर हैं, क्राइस्ट हैं, राम हैं, कृष्ण हैं, वे लोग यहां रहते हैं, अभी यह गांधी आया बूढ़ा, यह भी यहां रहता है। ऐसे दस-पांच लोग यहां हैं। लेकिन इनसे कुछ काम नहीं चलता। ये कोई भी लड़ाक नहीं हैं। इनसे कहो तो ये कहते हैं कि जो तुम्हारे एक गाल पर चांटा मारे, दूसरा उसके सामने कर दो। अब क्या करें? ये लड़ने को तैयार नहीं होते! ये कहते हैं, जो बाएं गाल पर चांटा मारे, दायां उसके सामने कर दो। और वह शैतान के सब आदमी, सारे प्राइम मिनिस्टर दुनिया के, वहां हैं। सारे मिनिस्टर वहां हैं। सारे प्रेसिडेंट्स वहां हैं। सारे धर्म-पुरोहित वहां इकट्ठे। तो मैंने कहाः और ऋषि-मुनि कहां गए, जो इतने आए थे?
उन्होंने कहाः तुम चूंकि बहुत ज्यादा निकट हो गए इतनी देर में, मैं तुम्हें अपने दिल की बात कह देता हूं। सौ ऋषि-मुनि आते हैं तो तुम यह मत सोचना कि सौ स्वर्ग में आ जाते हैं। सौ में से मुश्किल से एक आता है। और मैंने कहाः निन्यानबे? उन्होंने कहाः निन्यानबे लोगों को तो स्वर्ग भेजने का रास्ता बताते हैं, खुद पीछे के रास्ते से नरक को चले जाते हैं। इतने होशियार हैं ऋषि-मुनि कि जनता को कहते हैं कि स्वर्ग जाओ और पीछे से सीक्रेट पाथ बना रखे हैं उन्होंने। किताबें भी हैं, सीक्रेट पाथ की, पीछे के गुप्त रस्ते बना रखे हैं। उनसे खुद नरक चले जाते हैं। एकाध कोई भूल-चूक में उनके चक्कर में फंस कर स्वर्ग आ भी जाता है तो दो-तीन दिन में घबड़ा जाता है और एकदम दरवाजे पर धरना दे देता है। कहता हैहम उपवास करेंगे, अनशन करेंगे, हड़ताल कर देंगे। हमको नरक भेजो।
तो मैं बहुत हैरान हुआ। मैंने कहाः हम तो जमीन पर स्वर्ग आने की कोशिश करते हैं। यहां आए हुए, पहुंच गए लोग नरक जाना चाहते हैं? वह बोलेः हां, कारण हैं। तो उन्होंने कहा कि वह ऋषि-मुनि कहते हैं कि बिना भाषण के रात में नींद नहीं आती। यहां किसको भाषण करें? यहां स्वर्ग में कोई सुनने को राजी ही नहीं, क्योंकि जितने हैं, वे सब खुद ही भाषण देने वाले हैं। और वह ऋषि-मुनि कहते हैं बिना अनुयायियों के हमारे मन को राहत नहीं मिलती। हमें अनुयायियों से, फॉलोअर से बहुत प्रेम है और फॉलोअर सब नरक में हैं। तो वे कहते हैं हम वहीं जाएंगे। वे कहते हैं कि यहां सुबह अखबार भी नहीं छपता। स्वर्ग में कोई अखबार नहीं छपता है--भगवान ने बताया। और नरक में तो अखबार ही अखबार छपते हैं। तो वे ऋषि-मुनि कहते हैं कि बिना अखबार में सुबह नाम पढ़े, दिन भर हमें बड़ी बेचैनी रहती है, गर्मी लगती है। तो वहीं जाएंगे। तो दो दिन-चार दिन रहते हैं मुश्किल से, फिर नरक चले जाते हैं। सौ, दो सौ आदमी यहां टिके हैं, हजारों साल से। कोई रस नहीं है।

भगवान ने कहाः कई दफा तो मेरा मन भी होता है कि नरक ही चला जाऊं। यहां कोई रस नहीं है। एकदम बोर्डम है। किसी से बात करो तो वह कहता है, सब असार है। ये सब ज्ञानी यहां हैं। वे कहते हैं कि सब असार है, सब माया है। किसी बात में कोई रस नहीं लेते, कोई संगीत नहीं, कोई नृत्य नहीं।
तो मैंने कहाः यह तो बड़ी घबड़ाहट की बात है। मुझे तो बहुत दया आने लगी है। मैंने तो सोचा था कि आपसे कुछ दया पाऊंगा और मुझे तो आप पर दया आने लगी है। यह तो बड़े दुख की स्थिति में आप फंसे हैं। आपका छुटकारा कैसे किया जाए?
उन्होंने कहाः इधर एक तरकीब निकाल ली है। एक वृद्धजन आए थे, उनको मैंने कहा, तो उन्होंने कहा, तुम एक तरकीब करो। पुराना ताला निकाल कर अलग करो। बीच में दीवाल है--नरक के और भगवान के स्वर्ग के और बीच में दरवाजा है, ताला है। उन्होंने कहाः यह ताला अलग करो। नये ढंग का ताला लगाओ, जिसमें की- होल होता है, जिसमें छेद होता है, चाबी का। चाबी को निकाल कर की होल में से नरक का मजा देखते रहा करो। वह बूढ़े ने कहा कि इसी तरह तो हम दुनिया में दिन गुजारते हैं। पड़ोसी के की-होल में से देखते रहते हैं, क्या-क्या हो रहा है। दिन गुजर जाते हैं बड़े सुख से। रातें गुजर जाती हैं बड़े सुख के साथ। पड़ोसी की लीला देखते रहते हैं कि क्या-क्या हो रहा है। प्रेम हो रहा है कि लड़ाई हो रही है कि पत्नी पति को मार रही है कि क्या हो रहा है, क्या नहीं हो रहा! उसे देखने से बड़ा रस आता है। तो उस बूढ़े ने तरकीब बताई। हमने एक नया ताला लगा लिया है। इसी की-होल में से दिन गुजार देते हैं। या तो आर ए टी रैट, चूहा, सी ए टी कैट, बिल्ली, यह पढ़ते हैं या इस की-होल में से नरक का मजा देखते हैं।
मेरा भी मन हुआ कि उस की-होल में से देखूं नरक का मजा। कौन नहीं देखना चाहेगा? अगर आपमें से भी कोई होता तो उसका मन होता कि छोड़ो इन श्री भगवान को। जरा नरक का मजा देखें, क्या हो रहा है वहां!
मैंने भी उस की-होल में से देखा तो उन्होंने कहा कि यह जो दरवाजा है,
यह वह कल्पवृक्ष जो सूख गया, जिसके नीचे बैठ कर सब इच्छाएं पूरी हो जाती थीं, उसी को काट कर बना लिया है। इस दरवाजे में एक खूबी है। जिसका भी स्मरण करोगे, इस की-होल में से वही दिखाई पड़ने लगेगा। तो मैंने कहाः हे ऋषि-मुनि! जो तुम नरक में निवास कर रहे हो, तुमको देखना चाहता हूं।
एकदम सामने की-होल के एक दृश्य आ गया। कोई दस हजार से ज्यादा ऋषि-मुनि रहे होंगे। बड़ी भारी सभा हो रही है। पर उस सभा में बड़ी गजब की बातें दिखाई पड़ीं। उसमें एक बड़ी गजब की बात यह दिखाई पड़ी कि वह सभा बड़ी डेमोक्रेटिक थी। ऐसा नहीं था कि जैसे हम यहां। मैं एक बोल रहा हूं और आप सब सुन रहे हैं, आप सबके साथ अन्याय कर रहा हूं और अकेला बोल रहा हूं।
उस डेमोक्रेटिक सभा में दस हजार आदमी इकट्ठे बोल रहे थे, क्योंकि उनका कहना है किसी मनुष्य को यह अधिकार नहीं है कि किसी के ऊपर अनाचार करे। तो वहां दस हजार माइक लगे हुए थे और दस हजार आदमी बोल रहे थे। वहां ऐसा तूफान मचा हुआ था कि कुछ समझ में नहीं आता था।
मैंने श्री भगवान से कहाः यह नरक के लोग तो हमसे बहुत आगे निकल गए। जमीन पर ऐसा होता है--एक आदमी बोलता है, बाकी लोग भी बोलते हैं। लेकिन मन ही मन में बोलते रहते हैं। ऐसा नहीं करते। एक आदमी बोलता है, बाकी लोग अपने मन-मन में बोलते रहते हैं। ऐसा नहीं होता कि सभी लोग बोलें। यह तो बहुत ही शिक्षित हो गए। यह तो ह्युमन इक्वेलिटी, तो मनुष्य-जाति की समानता का सिद्धांत इन्होंने पूरा कर दिया। यह कोई किसी की सुन नहीं रहे। किसको फुरसत है?
जमीन पर भी ऐसा होता है। कोई किसी की नहीं सुनता, लेकिन फिर भी ढंग तो
हम दिखलाते हैं कि सुन रहे हैं, इस ढंग से बैठे रहते हैं कि मालूम होता है, सुन रहे हैं। वैसे अपनी बातें भीतर-भीतर कहते रहते हैं, लेकिन यह क्या बात हुई?
भगवान ने कहाः यह नरक के लोग बड़े प्रोग्रेसिव हैं, बड़े प्रगतिशील हैं। इनका तो मुकाबला ही नहीं, तुम्हारी पृथ्वी क्या, स्वर्ग को इन्होंने

बर्बाद कर दिया। और दृश्य बदलते गए। ऋषि नाच रहे हैं, नदियों के किनारे, बड़े आधुनिक ढंग के नाच। बहुत घबड़ाहट देख कर होने लगी।
पूछा तो उन्होंने कहाः इसमें कोई कसूर नहीं है। इन सब ऋषियों का कहना
है कि हमने खूब त्याग-तपश्चर्या की, अब हम उसका फल चाहते हैं। हमने बहुत कष्ट भोगे, बहुत उपवास किए, शरीर को सुखाया। अब हम फल चाहते हैं। हमें सुख चाहिए। अच्छे मकान चाहिए, एअरकंडीशन चाहिए, और नरक पूरा एअरकंडीशन कर डाला है उन लोगों ने। और नाच चाहिए और शराब चाहिए और शराब के झरने बहा रहे हैं और बगीचे बसा रहे हैं।
मैंने कहाः यह तो बिल्कुल स्वाभाविक है। ऐसा तो हमारे मुल्क में हुआ। आजादी के पहले कुछ लोगों ने थोड़ा-सा जेल गए, तपश्चर्या की। पीछे वे कहने लगे, हमको गददी चाहिए, हमको दिल्ली चाहिए, क्योंकि हमने किया त्याग। हम भोग करेंगे। ऐसा तो जमीन पर भी हुआ। वही यहां हो रहा है, यह तो सब जगह होगा। जो त्याग करेगा, वह भोग करने के लिए ही तो त्याग करेगा।
वे कहते हैं, हम छोड़ते हैं तो हम पाने के लिए छोड़ते हैं। यहां छोड़ेंगे,
वे कहते हैं तो वहां स्वर्ग में मिलेगा। स्वर्ग में नहीं मिला तो वे लोग नरक में ले रहे हैं। बहुत घबड़ाहट, बहुत बेचैनी मुझे मालूम हुई। श्री भगवान से मैंने कहाः आपकी हालत तो बड़ी खराब है। और छोड़िए, इस उम्र में इसको मत सीखिए। यह अंग्रेजी भाषा कोई अब आपके पल्ले नहीं पड़ेगी।
वे बोले कि कैसे करूं। एक ट्यूटर लगा छोड़ा है। वह आता है सिखाता है, बहुत डांट-डपट बताता है, बहुत परेशान करता है, छोटी-छोटी बात पर कहता है, खड़े होओ, बैठो। पुराने ढंग का ट्यूटर है। बेंत बताता है, गाली बकता है, बड़ा गुस्सा जाहिर करता है। मैंने कहाः आपको पता नहीं है। होमवर्क न हो पाए तो कॉपी में पांच रुपये का नोट छिपा कर बता दिया करें। उसी वक्त ट्यूटर भी आ गए। वह बूढ़े सज्जन थे। हिंदुस्तान के किसी हाई स्कूल में प्रधानाध्यापक रहे थे। वह आए और उन्होंने आते ही उसे डांटना शुरू किया कि होमवर्क किया कि नहीं?
श्री भगवान थर-थर कांपने लगे। उन्हें विषाद-योग हो गया। बहुत घबड़ाहट हुई। उन्होंने कॉपी निकाली। डरते-डरते पांच का नोट रखा और कॉपी दी। ट्यूटर ने देखा और कहाः शाबाश! आज तुमने होमवर्क किया और अब तू बिल्कुल बेफिकर रह। अगर ऐसा ही होमवर्क रोज किया, परीक्षा भी देने की अब कोई जरूरत नहीं पड़ेगी। और अगर सदा ही इसी तरह का अनुशासन, इसी तरह का डिसिप्लिन माना और इसी तरह रोज-रोज प्रगति की, पांच से दस, दस से पंद्रह, पंद्रह से बीस, तो पक्का मान तेरा मैरिट में स्थान निश्चित है। ट्यूटर ने कहाः मैं जरा सब्जी ले आऊं। तू अपना आगे काम कर। मैं थोड़ी देर में फिर आता हूं, फिर होमवर्क देखूंगा।
ट्यूटर तो चला गया। भगवान ने कहा कि धन्य हैं, आपने अच्छी तरकीब बताई।
यह नया टेक्नीक है शिक्षा का। हमको पता भी नहीं। हम वही पुराने ढंग से आर ए टी रैट, आर ए टी रैट रटे जा रहे थे। अब तो हम जरूर ही, न सही कुछ हो गए हैं। डी. डी. शैतान तो हम भी मैट्रिक तो पास हो ही जाएंगे। अब तो आशा बंधती है। मैंने उनसे पूछाः आपकी मातृभाषा क्या है? यह कुछ लोग कहते हैं संस्कृत है, कोई कहता है अरबी है, कोई कहता है हिब्रू है। आपकी मदर-टंग क्या है?
भगवान ने कहाः बड़ी मुश्किल की बात है। सारी दुनिया में लोग मुझसे कहते हैं, हे अनाथों के नाथ! और हमारी हालत यह है कि हम सुप्रीम आर्फन, हमारे मां-बाप हैं ही नहीं और दुनिया हमसे कहती है, हे अनाथों के नाथ! और हमसे ज्यादा अनाथ कोई नहीं है, क्योंकि हमारा कोई मां-बाप ही नहीं है। जो जमीन पर अनाथ हैं, उनके मां-बाप तो रहे होंगे। मर गए होंगे। हमारे हैं ही नहीं, कभी थे ही नहीं। हम तो परम अनाथ हैं, सुप्रीम आर्फन। तो हमारी कौन सी मातृभाषा है? मुझे बड़ी मुश्किल हुई, हम तो यही सुनते थे कि उनकी कोई खास मातृभाषा है। उन्होंने कहाः मातृभाषा ही नहीं है, क्योंकि हमारी कोई मां ही नहीं है।
मैंने उनसे पूछा कि यह बड़ी अजीब बात है। सारी दुनिया में भाषाएं मातृभाषाएं क्यों कही जाती हैं? पितृभाषाएं क्यों नहीं कही जातीं? फादर-टंग क्यों नहीं कहते? मदर-टंग क्यों कहते हैं?

वह बेचारे बड़े दिक्कत में पड़ गए। सिर खुजलाने लगे। कहने लगे। यह तो मेरे कोश में कहीं लिखा भी नहीं है। और इस शिक्षक ने पढ़ाया भी नहीं है। परीक्षा में आएगा भी नहीं। आप कहां-कहां के प्रश्न पूछते हैं? तो मैंने उनसे कहा कि फिर मुझसे पूछ लीजिए।
उन्होंने कहाः आप बता दें तो बड़ी कृपा हो, मैं नोट कर लूं। उन्होंने अपनी कापी निकाल ली और नोट करने लगे। मैंने उनसे कहा कि जहां तक मैं समझता हूं इसका एक ही कारण हो सकता है। बच्चों की भाषा, मातृभाषा इसीलिए कहलाती है कि बच्चे कभी पिता को मां के सामने बोलते देख ही नहीं पाते। मां ही हमेशा बोलती है। पिता सुबह उठ भी नहीं पाता कि मां बोलना शुरू कर देती है। और न मालूम क्या-क्या बोलना शुरू कर देती है। पिता बेचारा डर के मारे अखबार पढ़ता रहता है और मां बोलती ही चली जाती है। पिता किसी तरह नाश्ता करता है और मां बोलती चली जाती है। पिता दफ्तर से लौटता है, खाना खाता है, मां बोलती चली जाती है। यह क्रम रात, पिता सोकर गुरहाने लगता है और मां बोलती चली जाती है। इसलिए बच्चे इसको कहते हैं मदर-टंग। यह मातृभाषा है। इसलिए दुनिया में कहीं इसे पितृभाषा नहीं कहा जाता।
श्री भगवान ने जल्दी से उसे नोट कर लिया। वे बड़े उत्सुक विद्यार्थी मालूम पड़े। मैंने उनसे कहा कि अब मैं जाऊं? मैं तो आया था कुछ आपसे पाने को। यहां तो हालत उलटी हुई जा रही है, आप मुझी से पूछने लगे और मेरी बातों को लिखने लगे। हम तो सोचते थे कि ज्ञान मिलेगा, यहां उलटा ज्ञान देना पड़ रहा है। मैं जाता हूं?
मैं बाहर निकलने लगा तो वे भागे हुए बाहर आए और उन्होंने कहा कि अपना पता-ठिकाना तो देते जाओ, कभी जरूरत पड़े? एक ऐसी तरकीब बता दी परीक्षा पास होने की। कोई और मौका आ जाए तो पूछने आ जाऊंगा।
मैंने कहाः पता मैं बताए देता हूं, लेकिन पहले से एपाइंटमेंट अगर नहीं लिया तो मिलना बहुत मुश्किल है। तो मैंने उनको पता लिखा दिया, पांच सौ पांच, कालबा देवी रोड, जीवन जागृति केंद्र। फोन नंबर लिखा दिया--22331 और कहा, इसको रख लो। लेकिन पहले से अपाइंटमेंट ले लेना, क्योंकि जीवन जागृति केंद्र के लोग बड़े मजबूत हैं। तुम लाख सिर पटको, बहुत मुश्किल से भीतर घुसने देंगे और मुझसे मिलने देंगे। लेकिन तुम भी हठयोग पकड़ कर बैठ ही जाना और कहना कि मैं जाऊंगा ही नहीं बिना मिले, तो शायद किसी को दया आ जाए और तुमको भीतर ले आए और दो-चार-पांच मिनट मिलने का वक्त मिल जाए।
फिर मैंने कहा अब मैं जाऊं? तुम्हारी घड़ी में कितने बजे हैं? उन्होंने कहाः घड़ी मेरी बहुत दिन से बंद है। यह जो गांधी बुड्ढा आया था, उसी ने मुझको यह घड़ी भेंट कर दी थी। तो मैंने इसको लटका लिया। न इसमें कांटा है, न इसमें डायल है, न कुछ है, न कुछ है। लेकिन यहां कोई जरूरत भी नहीं पड़ती कि देखें कि कितना बजा है। तो मैंने कहाः मुझे जाने दें, मुझे ठीक साढ़े छह बजे क्रास मैदान में पहुंचना है। वहां कुछ लोग मनोरंजन के लिए इकट्ठे हुए होंगे। उनको देर हो जाएगी तो बहुत दिक्कत होगी। मैं इसी घबड़ाहट में मेरी नींद खुल गई। जाग कर बहुत सोचने लगा कि यह कैसा सपना है! कैसा, यह कैसा सपना है? अब लेकिन सपने से कोई झगड़ा भी नहीं कर सकता कि कैसा? सपना जैसा है, है।
यह कैसे श्री भगवान हैं, यह कैसा शैतान है? लेकिन हालत ऐसी हो गई है। शैतान के मकान बड़े होते चले गए। भगवान का मकान छोटा होता चला गया। शैतान ने लोगों की अंतर्राष्ट्रीय भाषा समझ ली, आदमी की कमजोरी समझ ली, इंटरनेशनल लैंग्वेज और कोई भी नहीं है। आदमी की कमजोरी है। अंग्रेज भी उसी बात में कमजोर है जिसमें हिंदू। जर्मन भी उसी बात में कमजोर है, जिसमें अफ्रीकन। कमजोरियां, ह्युमन वीकनेसेस, एक ही हैं। शैतान ने आदमी की कमजोरी की भाषा समझ ली। अंतर्राष्ट्रीय भाषा समझ ली। वह अंग्रेजी, वह अंतर्राष्ट्रीय भाषा से सारे मनुष्यों को देख रहा है।
भगवान अभी तक अंतर्राष्ट्रीय भाषा नहीं समझ पाया और आदमी जो भगवान को प्रेम करते हैं, उन्होंने लोकल लैंग्वेजस बना ली हैं कि हम हिंदू हैं, हम मुसलमान हैं, हम ईसाई हैं। उन्होंने खंड-खंड बना लिए। क्या आपको पता है, शैतान के शिष्यों के कितने संप्रदाय हैं?

स्वर्ग उजड़ता जा रहा है। नरक बसता जा रहा है। भगवान ने सोचा कि नरक में जाकर रहने लगूं तो शायद कुछ राज मिल जाए। एक आदमी मरा। उसकी पत्नी ने एक प्रेतात्मविद से कहा कि क्या तुम मेरे पति की आत्मा को बुला सकते हो? उसने उसके पति की आत्मा को बुलाया। उसकी पत्नी ने उस आत्मा से पूछा कि तुम कहां हो? क्या तुम सुख में हो, आनंद में हो? उसके पति ने कहा कि मैं परम आनंद में हूं। हे देवी! मैं बहुत परम आनंद में हूं। उसकी पत्नी ने कहाः क्या उससे भी ज्यादा आनंद में हो जितने मेरे साथ थे?
उसने कहाः अब तो भय का कोई कारण नहीं है। तुम मुझसे काफी दूर हो। मैं सच्ची बात कह दूं। तुम्हारे साथ था, उससे भी बहुत ज्यादा आनंद में हूं। उसकी पत्नी ने कहाः इसका मतलब स्पष्ट है कि तुम स्वर्ग में हो। उसके पति ने कहा कि नहीं देवी! मैं नरक में हूं। बहुत घबड़ाई। उसने कहा कि नरक में होकर तुम यहां से आनंद में? उसके पति ने कहा कि जमीन नरक से भी ज्यादा बदतर हो गई है। अब तो नरक में भी अच्छा लगता है जमीन से।
तो अगर भगवान भी यह सोचने लगा हो कि नरक में बस जाएं तो कोई आश्चर्य नहीं है, क्योंकि स्वर्ग बिल्कुल उजाड़ हो गया है। वहां अब कोई नहीं जाता। वहां के दरवाजों पर मिट्टी जमी है। धीरे-धीरे वे दरवाजे टूट जाएंगे दो-चार वर्षाओं में। दो-चार वर्षाएं और आएंगी। मनुष्य-जाति पर वह मकान गिर जाएगा। दो-चार और तूफान आएंगे वे बल्लियां उखड़ जाएंगी। कुत्ता तो मर गया है भगवान का, जो उनका रखवाला था। कौन जाने भगवान भी मर गए हों या किसी दिन मर जाएं। मैंने आपको पूर्व सूचना दे दी कि भगवान मर चुके हैं। यह भगवान जो हमने अब तक पुराणों की कथाओं के आधार पर गढ़े थे, जो हमने कल्पना के लोक में निर्मित किए थे, वह जा चुके। क्या किसी दूसरे भगवान को जन्म देने की इच्छा है?
निश्चित ही वह भगवान किसी रूप का भगवान नहीं होगा। उसकी कोई शक्ल नहीं होगी। उसके हाथ-पैर नहीं होंगे, उसका नाम नहीं होगा, उसके मंदिर नहीं होंगे, उसकी मस्जिदें नहीं होंगी। उस भगवान का एक व्यापक विस्तार होगा प्रेम का, आनंद का, शांति का, प्रकाश का, ज्योति का।
भगवान का अर्थ किसी व्यक्ति से नहीं है। इसलिए यह न पूछें कि उसकी शक्ल क्या है और वह कैसे रहता है? भगवान से अर्थ है एक अनुभूति का, भगवान से अर्थ है एक अनुभूति का। कोई नहीं पूछता है कि प्रेम कैसा है और कहां रहता है? फिर क्यों पूछते हैं कि परमात्मा कैसा है और कहां रहता है? प्रेम है एक अनुभूति। प्रेम की ही पराकाष्ठा परमात्मा की अनुभूति है।
एक व्यक्ति से मैं प्रेम करूं, यह प्रेम कहलाता है और अगर समस्त के प्रति मेरी वही भाव-दशा हो जाए तो यह परमात्मा कहलाती है। परमात्मा प्रेम का परम विकास है। यह बच्चों जैसी एंथ्रोपोमार्फिक बातें कि ईश्वर बैठा हुआ है ऊपर और दुनिया बना रहा है, और दुनिया चला रहा है, यह बच्चों जैसी बातें छोड़ें। यह बातें गईं। ये बातें छोड़ें कि भगवान ने एक दिन तय किया और दुनिया बना दी और कहा कि जाओ बन गई दुनिया और चलो। ये बच्चों जैसी बातें छोड़ें।
भगवान ने ऐसी किसी दिन दुनिया नहीं बना दी है और भगवान और उसकी सृष्टि
दो अलग बातें नहीं हैं। क्रिएटर और क्रिएशन दो अलग बातें नहीं हैं। क्रिएटिविटी सर्जनात्मक ऊर्जा जब अप्रकट होती है तो उसे हम परमात्मा कहते हैं और जब प्रकट होती है तो हम उसे सृष्टि कहते हैं। जब हृदय में कोई गीत उठता है तो वह परमात्मा है। और जब वह वाणी से प्रकट हो जाता है तो वह सृष्टि है।
यह समस्त सृष्टि, यह समस्त सत्ता, यह पूरा एक्झिस्टेंस किसी बहुत अंतर-निनाद को अपने भीतर लिए है। कोई गीत, कोई संगीत, कोई आनंद वह फूंकना चाह रहा है। वह प्रकट हो रहा है। वही प्रकटीकरण यह संसार है। संसार और परमात्मा दो विरोधी बातें नहीं हैं। परमात्मा का ही प्रकाशन संसार है और जो लोग प्रेम को अनुभव करेंगे, वह सब तरफ उस परमात्मा की छवि को, छवि से भूल में न पड़ जाएं नहीं तो वही कृष्ण कन्हैया बांसुरी बजाते हुए दिखने लग गए हैं। धनुर्धारी राम दिखने लगे। वह परमात्मा के स्पर्श को सब तरह अनुभव

करेंगे। सब तरफ जो है, वही है। लेकिन उसे जानने के लिए, उसे पाने के लिए खुद के भीतर ना-कुछ हो जाना जरूरी है। शून्य हो जाना जरूरी है।
मैंने कल उसकी बात आपसे कही है कि कैसे शून्य हो सकते हैं। ज्ञान को छोड़ दें और प्रेम को विकसित होने दें। जहां ज्ञान का तट छूटता है और प्रेम के फूल खिलने शुरू हो जाते हैं, वहीं वह संगीत पैदा होता है जो समस्त के भीतर छिपा है और खुद के प्राणों को समस्त से जोड़ देता है, वह अनुभव ही परमात्मा है।
ये थोड़ी सी बातें इन चार दिनों में मैंने आपसे कही हैं। इस आशा में नहीं कि मेरी बातों को आप मान लेना। मान लेने का मैं दुश्मन हूं। मेरी बातों को मानना मत। मैं कोई उपदेशक नहीं हूं। न मैं कोई गुरु हूं और न मेरी कोई यह मंशा है कि मेरी बात कोई माने। फिर मेरी मंशा क्या है? मेरी मंशा यह है कि मैंने अपने हृदय की बातें आपसे कही, इन पर विचार करना, मानना मत। मानने की जल्दी मत करना, न मानने की जल्दी भी मत करना। क्योंकि जो मानने या न मानने की जल्दी करता है, वह सोच-विचार नहीं कर पाता।
मैंने जो कहा है उस पर सोच-विचार करना और सोच-विचार भी उस सीमा तक करना, जब तक कि उस बात के संबंध में जरा सा भी संदेह शेष न रह जाए। जरा सा भी संदेह शेष रहे तो और सोचना, और सोचना। सत्य के संबंध में बहुत जल्दी नहीं। बहुत धैर्य, बहुत शांति, बहुत पेशेंस से सोचना-सोचना, संदेह करना, संदेह करना।
और संदेह करते-करते, सोचते-विचारते किसी क्षण अगर कोई चीज दिखाई पड़ेगी कि सत्य है तो फिर वह मेरा कहा हुआ सत्य नहीं होगा, किसी और का कहा हुआ नहीं, वह आपका सत्य हो जाएगा और स्मरण रहे, खुद का सत्य ही केवल मुक्त करता है। किसी और का सत्य मुक्त नहीं करता है।
तो अंत में एक निवेदन कर दूं, जिसका खतरा रोज है। कहीं मेरी बातें आपके भीतर जाकर, बैठ कर विश्वास न बन जाएं। कोई मेरी बातों को न मान लें, नहीं तो वहां एक खतरा पैदा हो जाएगा। मेरी बातों को मानना मत, इतनी कृपा करना। चार दिन सुना है, बड़ी कृपा की। अंतिम कृपा की प्रार्थना यह करता हूं, मेरी बातों को मानना मत। सोचना, विचारना, खोजना, काटना और अगर किसी दिन कुछ बच जाए, वह फिर आपका होगा। और वह जो आपका है, वही आपकी आत्मा है, वही आपका सत्य है, वही सत्य मुक्त करता है। परमात्मा करे सत्य आपको मुक्त करे, ऐसी प्रार्थना करता हूं।

और इतने दिन इतनी शांति से न मालूम कितनी कड़वी-मीठी बातों को इतने प्रेम से सुना, उसके लिए बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं। अंत में पुनः सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।